आरोग्य की कुंजी

गांधीजी

गांधीजी

अनुवादिका सुशीला नय्यर

पहली आवृत्ति, 1948

मुद्रक और प्रकाशक :
जितेन्द्र ठाकोरभाई देसाई,
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-380 014
प्रकाशक का निवेदन

गांधीजी जब 1942-'44 के बीच आगाखाँ महत, पूरा में जरबन्द थे, तब उन्होंने ये प्रकरण लिखे थे। जैसा कि मूल पुस्तककी हस्तलिखित प्रति बतलाती है, उन्होंने 28-8-'42 को ये प्रकरण लिखने शुरू किये और 18-12-'42 को इन्हें पूरा किया था। उनकी दृष्टिमें इस विषयका इतना महत्त्व था कि वे हमेशा इन्हें प्रेसमें देने से हिचकिचते रहे। वे धीरज सबकर इन प्रकरणोंको बाबरा तब तक दोहराते रहे, जब तक इस विषय पर प्रकट किये गये अपने विचारोंसे उन्हें पूरा संतोष न हो गया। अगर उनका हमेशा बढ़ते अनुभव इन प्रकरणोंमें कोई सुधार करनेकी पेंशन देता, तो वैश्विक करनेका उनका इंतजार था। मूल पुस्तक गुजरतीमें लिखी गई थी, जिसका हिंदी और अंग्रेजी अनुवाद गांधीजीने अपनी रहनु माईमें डॉ. मुशीला वाचारसे कराया था। घटा-बढ़ाकर अतिम रूप देनेकी दृष्टिमें गांधीजीने इन दोनें अनुवादोंको देख भी लिया था।

इसलिए पाठक यह मान सकते हैं कि तन्दुरस्तीके महत्त्वपूण विषय पर गांधीजी अपने देशवासियोंसे और दुनियासे जो कुछ कहना चाहते थे, उसका अनुवाद खुद उन्होंने ही किया है। ईश्वरकी और उसके प्राणियोंकी सेवा गांधीजीके जीवनका पवित्र मिशन था और तन्दुरस्तीके प्रश्नका अध्ययन उनकी दृष्टिमें उसी सेवकोंका एक अंग था।

अहमदाबाद, 24-7-'48
प्रस्तावना

‘आरोग्यके विषयमें सामान्य ज्ञान’ शीर्षकसे ‘इण्डियन ऑपीनियन’ के पाठकोंके लिए मैंने कुछ प्रकारण 1906 के आसपास दक्षिण अफ्रीकामें लिखे थे। बादमें वे पुस्तकके रूपमें प्रकाश हुए। हिन्दुस्तानमें यह पुस्तक मुखिकलसे ही कहीं मिल सकती थी। जब मैं हिन्दुस्तान वापस आया उस वक्त इस पुस्तककी बहुत मांग हुई। यहाँ तक कि स्वामी अखंडोत्तरजीने उसकी नई आवृत्ति निकालनेकी इजाजत मांगी और दूसरे लोगोंने भी उसे छपवाया। इस पुस्तकका अनुवाद हिन्दुस्तानीकी अनेक भाषाओंमें हुआ और अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाश हुआ। यह अनुवाद पद्धतिमें पहुँचा और उसका अनुवाद युरोपीकी भाषाओंमें हुआ। परिणाम यह आया कि पद्धतिमें या पूर्वमें मेरी और और और कोई पुस्तक इतनी लोकप्रिय नहीं हुई, जितनी कि यह पुस्तक हुई। उसका कारण मैं आज तक समझ नहीं सका। मैं तो ये प्रकरण सहज ही लिख डाले थे। मेरी निगमों उनकी कोई खास क़दर नहीं थी। इतना अनुमान मैं ज्ञात करता हूँ कि मैंने मनुष्यके आरोग्यको कुछ नये ही स्वरूपमें देखा है और इसलिए उसकी रखाके साधन भी सामान्य बैद्यों और डॉक्टरोंकी अपेक्षा कुछ अलग ढंगसे बताये हैं। उस पुस्तककी लोकप्रियताका यह कारण हो सकता है।

मेरा यह अनुमान ठीक हो या नहीं, मगर उस पुस्तककी नई आवृत्ति निकालनेकी मांग बहुतसे मिलती है। मूल पुस्तकमें मैंने जिन विचारोंको रखा है उनमें कोई परिवर्तन हुआ है या नहीं, यह जाननेकी उस्तुकता बहुतसे मिलती है। आज तक इस इच्छाकी पूर्ति करनेका मुख्य कभी क़दर ही नहीं मिला। परन्तु आज ऐसा अवसर आ गया है। उसका फायदा उठा कर मैं यह पुस्तक नये ही सिर्फ़ लिख रहा हूँ। मूल पुस्तक तो मेरे पास नहीं है। इसे जरूर अनुभवका असर मेरे विचारों पर पड़े बिना नहीं रह सकता। मगर जिन्होंने मूल पुस्तक पढ़ी होगी, वे देखेंगे कि मेरे आजके और 1906 के विचारोंमें कोई मौलिक परिवर्तन नहीं हुआ है।

इस पुस्तकको नया नाम दिया है। ‘आरोग्य कंजी’। मैं यह उम्मीद दिला सकता हूँ कि इस पुस्तकको विचारपूर्वक पढ़नेवालों और इसमें दिखा हुआ नियममें पर अपने कर्मचारीलों और अपने डॉक्टरों और अपने कर्मचारीके आरोग्यकी कंजी मिल जाएगी।

मो. क. गांधी
आगाखाँ महल,
यरवडा, 27-8-'42
पहला भाग

1. शरीर

(28-8’42)

शरीरके परिचयसे पहले आरोग्य किसे कहते हैं, वह समझ लेना ठीक होगा। आरोग्यके मानी हैं तन्दुरस्त शरीर। जिसका शरीर व्याधि-रहित है, जिसका शरीर सामान्य काम कर सकता है, अर्थात जो मुनुष्य बौद्ध धकानके रोज दस-बाहर मील चल सकता है, जो बौद्ध धकानके सामान्य मेहनत-मजदूरी कर सकता है, सामान्य खुराक पच सकता है, जिसकी इनशिया और मन स्वस्थ हैं, ऐसे मनुष्यका शरीर तन्दुरस्त कहा जा सकता है। इसमें पहलवानों या अतिशय दौड़ने-कूदने-तांतरोंका समावेश नहीं है। ऐसे असाधारण बलवाले व्यक्तिका शरीर रोगी हो सकता है। ऐसे शरीरका विकास एकांगी कहा जायगा।

इस आरोग्यकी साधना जिस शरीरको करनी है, उस शरीरका कुछ परिचय आवश्यक है।

प्राचीन कालमें कैसी तालीम दी जाती होगी, यह तो विधाता ही जाने या शोध करनेवाले लोग कुछ जानते होंगे। आधुनिक तालीमका श्रेद्धा-बहत परिचय हम सबको है है। इस तालीमका हमारे दिन-प्रतिदिनके जीवनके साथ कोई सम्बन्ध नहीं होता। शरीरसे हमें सदा ही काम पड़ता है, मगर फिर भी आधुनिक तालीमसे हमें शरीरका ज्ञान नहीं-सा होता है। अपने गांव और खेतोंके बारोंमें भी हमारे ज्ञानके यही हाल हैं। अपने गांव और खेतोंके बारोंमें हम कुछ भी नहीं जानते, मगर भूगोल और खगोलको तोतेकी तरह रट लेते हैं। यहाँ कहनेका अर्थ यह नहीं है कि भूगोल और खगोलका कोई उपयोग नहीं है, मगर हरएक जीव अपने स्थान पर ही अच्छी लगती है। शरीरके, धरके, गांवके, गांवके चारों ओरके प्रदेशके, गांवके खेतोंमें पैदा होनेवाले वनस्पतियोंके और गांवके इतिहासके ज्ञानका पहला स्थान होना चाहिये। इस ज्ञानके पाये पर खड़ा दूसरा ज्ञान जीवनमें उपयोगी हो सकता है।

शरीर पंचभूतका पुतला है। इसीसे कविने गाया है:
पत्ते, पानी, पृथ्वी, प्रकाश और आकाश,
पंचभूतके खलसे बना जगतका पाष।

(29-8’42)
2. हवा

(31-8-'42)

हवा शरीरके लिए सबसे जरूरी ज्ञान है। इसीलिए ईश्वरने हवाको सर्वत्र बनाया है और वह हमें बिना किसी प्रयत्नके मिल जाती है।

हवाको हम नाकके द्वारा फेफड़ोमें भरते हैं। फेफड़े धीरकनीका काम करते हैं। वे हवाको अन्दर खींचते हैं। और बाहर निकालते हैं। बाहरकी हवामें प्रणवायु होती है। वह न मिले तो मत्यु जिंदा नहीं रह सकता। जो हवा फेफड़ोसे बाहर आती है, वह जहरीली होती है। अगर यह जहरीली हवा तुर्गस-उधर न फैल जाये, तो हम मर जायें। इसलिए यह ऐसा होना चाहिये, जिसमें हवा अच्छी तरह आ-जा सके और सूर्य-प्रकाशके आनेका रास्ता भी हो।

हवाका क्रम रक्तकी शुद्धिकरना है। मगर हमें फेफड़ोमें हवा भरना और उसे बाहर निकालना ठीक तरहसे नहीं आता। इसलिए हमारे रक्तकी शुद्धिके बूँड़ी तरह नहीं हो पाती। कई लोग मुंहसे श्वास लेते हैं। यह बुरी आदत है। नाकके छुदने एक तरहकी छलनी रखी है, जिससे हवा छनकर भीतर जाती है, और साथ ही गरम होकर फेफड़ोंमें पहुँचती है। मुंहसे श्वास लेने से हवा न तो साफ होती है और न गरम ही हो पाती है।

इसलिए हर एक मनुष्यको चाहिये कि वह प्राणायाम सीख ले। यह क्रिया जितनी आसान है, उतनी ही आवश्यक भी है। प्राणायाम कई तरहके होते हैं। उन सबमें उतनेकी यहां आवश्यकता नहीं है। मैं यह नहीं कहना चाहता कि उनका कोई उपयोग नहीं है। मगर जिस मनुष्यका जीवन नियम-बद्ध है, उसकी सब क्रियाओं सहज स्पसे होती हैं। इससे जो लाभ होता है, वह अनेक प्रक्रियाओंके करनेसे भी नहीं होता।

चलते, फिरते और सोते तक अगर लोग अपना मुंह बन्द रखे, तो नाक अपना क्रम अपने-आप करेगी ही। सुबह उठकरी जैसे हम मुंह साफ करते हैं, वैसे ही हम्य नाक भी साफ करनी होती है। नाकके मैल हो तो उसे निकाल डालना चाहिये। उसके लिए उसमें उतम वस्तु साफ पानी है। जो ठंडा पानी सहज न कर सके, वह कुंभकूर्णा पानी उस्तेमल करे। हाथों या एक कड़ोमें पानी लेकर उसे नाकमें डालना चाहिये। नाकके एक छत्रसे चढ़कर दूसरसे हम निकाल सकते हैं और नाककें द्वारा पानी पी भी सकते हैं।

फेफड़ोमें शुद्ध हवा ही भरनी होनी चाहिये। इसलिए रातको आकाशके नीचे या बरामदे में सोनेकी आदत डालना अच्छा है। हवा से सरदी लग जायी, यह डर नहीं रखना चाहिये। ठंड लगे तो स्वाद कपड़े हम ओढ़ सकते हैं। ओढनेका कपड़ा गले से ऊपर नहीं जाना चाहिये। अगर सिर ठंडको बरदास्त न कर सके तो उस पर एक समान बांध लेना चाहिये। मतलब यह कि नाक को, जो कि हवा लेनेका द्वारा है, कभी ठंकना नहीं चाहिये।
सोते समय दिनके कपड़े उतार देने चाहिये। रातको कम कपड़े पहनने चाहिये और वे ढीले होने चाहिये। शरीरको चदरसे ढंके तो रखना ही है, इसलिए वह जितना खुला रहे उतना ही अच्छा है। दिनमें भी कपड़े जितने ढीले पहने जाय उतना ही अच्छा है।

हमारे आसपास की हवा हमेशा शुद्ध ही होती है, ऐसा नहीं होता। और न सब जगहकी हवा एकसी ही होती है। प्रदेशके साथ हवा भी बदलती है। प्रदेशका चुनाव हमारे हाथमें नहीं होता। मगर घरका चुनाव थोड़ा-बहुत हमारे हाथमें जरूर रहता है; और रहना भी चाहिये। सामान्य नियम यह हो सकता है कि घर ऐसी जगह ढूँढ़ा जाय, जहां बहुत भीड़ न हो, आसपास गंदगी न हो और हवा और प्रकाश ठीक-ठीक मिल सकें।
3. पानी

(1-9-'42)

शरीरको जिन्दा रखने के लिए हवाके बाद दूसरा स्थान पानीका है। हवाके बिना मनुष्य थोड़े क्षण तक जिन्दा रह सकता है और पानीके बिना थोड़े दिन तक। पानी इतना आवश्यक है, इसलिए इंधन र में खूब पानी दिया है। बिना पानीकी मरभूमिम मनुष्य बस ही नहीं सकता। सहाराके रेगिस्तान जैसे प्रदेशोंमें बसती दिखाई ही नहीं पड़ती।

तन्दरुस्त रहने के लिए हरएक मनुष्यको चीनीस घंटेमें पांच पोंड पानी या प्रवाही इन्जीकी आवश्यकता है। पीनेका पानी हमेशा स्वच्छ होना चाहिये। बहुत जगह पानी स्वच्छ नहीं होता। कुछ का पानी पीनेके लिए हरएक मनुष्यके हरेक बातकी है। उसकी बात यह है कि हम देखकर या चखकर हमेशा वह नहीं कह सकते कि कोई पानी पीने लायक है या नहीं। देखनेमें और चखनेमें जो पानी अच्छा लगता है, वह दर असल जहरीला हो सकता है। इसलिए अनजाने पर या अनजाने कुछ पानी न पीने की प्रथा पालन करना अच्छा है। बंगालमें तालाब होते हैं। उनका पानी अक्सर नापके लायक नहीं होता। बड़ी नदियोंका पानी भी पीनेके लायक नहीं होता, खास करके जहां नदी बस्ती लगे हैं। जहां पानी स्वच्छ नहीं होता, उसमें पोद्रीयोंके लिए जरूरी नहीं होता। यह जससे अधिक बत्तिया। उसमें जहां अधिक अस्तित्व रहता है और जहां उसमें जल और नावेआया जाता है। तब यह है। भी यह सच्ची बात है कि करोड़ो मनुष्य इसी प्रकारका पानी तीक गुजार रहते हैं। मगर यह अनुकरण करने जैसी चीज हरफिज नहीं है। कुछ पानीके जीवन खाने की प्रामाण्य न दी होती, तो मनुष्य-जाति अपनी भूलों और अपने अक्षमिकेके कारण कबकी तोप हो गयी होती। हम यहां पानीका आरोग्यके साथ क्या समबन्ध नहीं है, इसका बिचार कर रहे हैं। जहां पानीकी पुगड़तोंके विषयमें शंका हो, वहाँ पानीको उबाल कर पीना चाहिये। इसका अर्थ यह है कि पानीके अपने पीनेका पानी लायक घूमना चाहिये। अस्तित्व लोग जो जीवन धर्मके नाम पर सुमुखियोंके पानी नहीं देते। अन्य लोग जो जीवन धर्मके नाम पर करते हैं, आरोग्यके नियमोंके जश्नका लिए करते हैं। अरुण को चाहिये क्यों करें? पानीको चाहनेका उत्साह जरूरी कर्तव्य लायक है। इससे पानीमें रहा कचरा निकल जाता है, लेकिन पानीमें रहा सूक्ष्म जन्म ही नहीं निकलते। उनका नाश करनेके लिए पानीको उबालना ही चाहिये। पीनेका कपड़ा हमेशा साफ होना चाहिये। उसमें छेद न होने चाहिये।
4. ख़ुराक

(2-9-'42)

हवा और पानीके बिना आदमी जितना ही नहीं रह सकता, यह बात सच है। मगर जीवनको टिकानेवाली तीज तो ख़ुराक ही है, अन्न मुद्दके प्राण है। ख़ुराक तीन प्रकार की होती है - मांसाहार, शाकाहार और मिश्राहार। असंख्य लोग मिश्राहारी हैं। ‘मांस’ में मछली और पक्षी भी आ जाते हैं। दूधको हम किसी भी तरह शाकाहारमें नहीं पिन सकते। सच पूछताज्ञा तो वही मांसका ही एक रूप है। मगर लोकिक भाषामें वह मांसाहारमें नहीं पिन सकता। जो गुण मांसमें हैं वे अधिकांश दूधमें भी हैं। डॉक्टरी भाषामें वह प्राणिज्ञ ख़ुराक - एनिमल फूड - माना जाता है। डॉक्टरी अंडे सामान्यतः मांसाहारमें पिने जाते हैं। मगर दरअसल वे मांस नहीं हैं। आजकल तो अंडे ऐसे तरीके पैदा किये जाते हैं कि मुर्सीके देखे विना भी अंडे देती हैं। इन अंडोंमें चूज कभी बनती ही नहीं है। इसलिए जिन्हें दूध पीनेमें कोई सकोच नहीं, उन्हें मनुष्य प्रकारके अंडे खानेमें कोई सकोच नहीं होना चाहिये।

डॉक्टरी मतके झुकाव मुख्यः मिश्राहारीकी और है। मगर पाहिज़में डॉक्टराको एक बड़ा समुदाय ऐसा है, जिसका यह दृष्ट मत है कि मनुष्यके शरीरकी रचना के देखते हुए वह शाकाहारी ही लगता है। उसके दौरान, आमँगण इत्यादि उसे शाकाहारी लिखते हैं। शाकाहारमें फलका समावेश होता है। फलोंमें ताजे फल और सुखा मेवा अर्थात् बादाम, पिस्ता, अखरोट, चिलगोजा इत्यादि आ जाते हैं। मैं शाकाहारका पक्षपाती हूँ। मगर अनुभवसे मुझे यह स्वीकार करना पड़ा है कि दूध और दूधसे बननेवाले पदार्थ जैसे मक्खन, दहीं वैगेराके बिना मुनुध-शरीर पूरी तरह तिक नहीं सकता। मेरे विचारोंमें वह महत्वका पर्याप्त हुआ है। मैंने दूध-धारीके बागी छोर वर्ष निकाले हैं। उस तत्र नीं शाकाहारी शक्तिमें किसी तरहकी कमी नहीं आयी थी। मगर अपनी मूर्तिको कारण में 1917 में सबसे पेचशिका शिकार बना। शरीर हाड़पिंज़र हो गया। मैंने हठपूर्वक दवा नहीं ली और उनके हाथ होने दूध या छाव भी में लेने तो किया। शरीर किसी तरह बनता ही नहीं था। मैंने दूध न लेनेका ब्रत लिया था। मगर डॉक्टर कहने लगा - 'यह ब्रत तो आपने गाय और भेंसके दूधका नज़रमें रखकर लिया था।' 'बकरीके दूध लेनेमें आपको कोई हर्ज नहीं होना चाहिये।' - मेरी धर्मपत्नीमें डॉक्टराका समर्थन दिया और में पिया। सच कहा जाता तो जिसने गाय-भेंसके दूधका त्याग किया है, उसे बकरीके वैगेराके दूध लेनकी छूट नहीं होनी चाहिये। शरीर में बाहुल्य भी पदार्थ तो बही होते हैं। सिर्फ़ मात्रा ती ही फरक होता है। इसलिए मेरे तत्त्वके केवल अक्षरोंका ही पात्र हुआ है, उसकी आत्मा नहीं। जो भी हो, बकरीके दूध तुलना आया और मैं वह लिया। लेते ही मुझे एक नया चेतन आया, शरीरमें शक्ति आयी और मैं खाट्से उठा। इस अनुभव परसे और ऐसे दूसरे अनेक अनुभवमें मैं लाचार होकर दृढ़नेत्र
पक्षपाती नहीं । मगर मेरा यह दृढ़ मत है कि असंख्य वनस्पतियों कोई न कोई ऐसी जरूर होगी, जो दूध और मांस की आवश्यकता अच्छी तरह पूरी कर सके और उनके दोषों से मुक्त हो ।

मेरी दृष्टि से दूध और मांस लेने में दोष तो है ही । मांस के लिए हम पशु-पक्षियों का नाश कर रहे हैं; और मांस के दृष्टि के सिवा दूसरा दूध पीने वाले हमें अधिकार नहीं है । नैतिक दोष के सिवा केवल आयुर्वेदी दृष्टि से भी इनमें दोष है । दोनों में वे मानिस के दोष आ जाते हैं । पालतू पशु सामान्यतः पूरी तरह सूचनात्मक नहीं होता । मनुष्यकी तरह पशुओं के भी अनेक रोग होते हैं । अंतर्भाविकांश के बाद भी कई रोग परिशंक की नजर से छूट जाते हैं ।

सब पशुओं की अच्छी तरह परीक्षा करके अवस्था ज्ञात करते हैं । परन्तु मेरे दृष्टि से किसी भी दूध तो हानि नहीं है । इतनी ज्ञात करके इसकी परीक्षा करने की जरूरत नहीं है । इसके उदाहरण बहुत भी है । सबसे पहले उसे स्वातंत्र्य आश्रम आस्पदता नहीं होती है अर्थात इसे डॉक्टर और हकीमों की सलाह नहीं मानना चाहिए । उसे अपनी स्वच्छता के अनुसार रखना चाहिए ।

अब जहा युक्ताहरके बारे में विचार करें । मनुष्य-शरीर के स्नायु बनानेवाले, दूध की आवश्यकता रहती है । स्नायु बनानेवाले दूध दूध, मांस, दलों और सूखे मेंसें मिलते हैं । दूध और मांसें मिलनेवाले दूध दलों तथा पालतू पशुओं में अधिक उपयोग होते हैं और दूध के बाद भी दूध पीने वाले ज्ञात रहते हैं । भारतीय तथा उदाहरण हैं । दूध की उपयोग करने वाले दूध दलों में अधिकतम बहुत रहता है । मक्खन तो मांस करने वाले दूध दलों से अधिक उपयोग है । अब जहा युक्ताहरके बारे में विचार करें । मक्खन तो मांस नहीं होता है । उसे अपनी स्वच्छता के अनुसार रखना चाहिए । इसके अलावा सबक
सब मक्खन दूधमे से निकाल सके, ऐसा यत्र तो अभी तक बना ही नहीं है; और बननेकी संभावना भी कम ही है।

पूर्ण या अपूर्ण दूधके सिवा दृष्टे पदार्थोंकी शरीरको आवश्यकता रहती है। दृष्टे दृष्टे दर्जे पर गेहूं, बाजारा जुआर, चावल वगैरा अनाज खेज जा सकते हैं। हिन्दुस्तानके अलग अलग प्रान्तोमें अलग अलग किस्मके अनाज पाये जाते हैं। कई जगहों पर केवल स्वादके खातिर एक ही गुणवाले एकसे अधिक अनाज खाये जाते है।

(4-9-'42)

जैसे कि गेहूं, बाजारा और चावल तीनों चीजें श्रेणी श्रेणी मात्रामें एक साथ खायी जाती हैं। शरीरके पोषणके लिए इस मिश्रणकी आवश्यकता नहीं है। इससे खुराककी मात्रा पर अकुशल नहीं रहता और आमाशयका काम अधिक बढ़ जाता है। एक समयमें एक ही तरहका अनाज खाना ठीक माना जायगा। इन अनाजोंमें से मुख्यत उटारेश (निसस्ता) मिलता है। गेहूं न मिले और बाजारा, जुआर इत्यादि अच्छे न लगे या अनुकूल न आयें, वहाँ चावल लेना चाहिये।

(6-9-'42)

अनाजमात्राको अच्छी तरह साफ करके हाथ-चक्को में पीसकर बिना छाने इस्तेमाल करना चाहिये। अनाजकी भूसीमें सत्ता और क्षार भी रहते हैं। दोनों बड़े उपयोगी पदार्थ हैं। इसके उपरान्त भूसी में एक ऐसा पदार्थ होता है, जो बगार पचन ही निकल जाता है और अपने साथ मलकोभी निकलता है। चावलका दाना नाजुक होने के कारण इंधरने उसके उपर छिलका बनाया है, जो खानेके कामका नहीं होता। इसलिए चावलको कूटना पड़ता है। खुट्टा उतनी ही करनी चाहिये जिससे उपरका छिलका निकल जाये। मशीनमें चावलके छिलको क्रांतच उतनी ही अच्छी है करनी चाहिये। उसकी भूसी भी बिलकुल निकाल दाली जाती है। इसका कारण यह है कि चावलकी भूसी में बहुत मिठास रहती है; इसलिए अगर भूसी रखी जाय तो उसमें झरसी या कीड़ा पड़ जाता है। गेहूं और चावलकी भूसी निकाल दे, तो बाकी केवल उटारेश रह जाता है; और भूसीमें अनाजका बहुत क्रीमती हिस्सा चला जाता है। गेहूं और चावलकी भूसीको अकेला पकाकर भी खाया जा सकता है। उसकी रोटी भी बन सकती है।

कोकणी चावलोंको तो आटा पीसकर उसकी रोटी ही गरीब लोग खाते हैं। पुरे चावल पकाकर खानेकी अपेक्षा चावलके आटकी रोटी शायद अधिक आसानीसे पकती हो और थोड़ी खानेके पूरा सन्तोष भी दे।

हम लोगोंको दाल या शकके साथ रोटी खानेकी आवश्यकता है। इससे रोटी पूरी तरह चबायी नहीं जाती। उटारेशवाले पदार्थोंके निम्न हम चबाये और जितने वे लाकरके साथ मिले उतना ही अच्छा है। यह लार उटारेश
पचनेमें मदद करती है। अगर खुराकको बिना जबाये हम निरूप जायें, तो उसके पचनेमें लालकी मदद नहीं मिल सकती। इसलिए खुराकको उसी स्थितिमें खाना कि जिससे उसे चबाना पडे, अधिक लाभदायक है।

स्टार्च-प्रदान अनाजोंके बाद स्नात बोधनेवाली (प्रोटीनप्रदान) दालों इत्यादिको दूसरा स्थान दिया जाता है।

दालके बिना खुराकको सब लोग अपूर्ण मानते हैं। मांसाहारीको भी दाल तो चाहिये ही। जिस आदमीको मेहनत-मजबूरी करनी पड़ती है और जिसे पूरी मात्रामें बिलकुल दूध नहीं मिलता। उसका गुजरात दालके बिना न चलेये मैं समझ सकता हूं। मगर मुझे यह कहने के बाद भी अपने लागू इसके बिना चलेये मैं समझ सकता हूं। मगर मुझे यह कहने के बाद भी अपने लागू इसके बिना चलेये मैं समझ सकता हूं।

पचनेमें मदद करती है। अगर खराबको लबन जब ये हम लगाये जायें, तो उसके पचनेमें लालकी मदद नहीं मिल सकती। इसलिए खुराकको उसी स्थितिमें खाना कि जिससे उसे चबाना पडे, अधिक लाभदायक है।

स्टार्च-प्रदान अनाजोंके बाद स्नात बोधनेवाली (प्रोटीनप्रदान) दालों इत्यादिको दूसरा स्थान दिया जाता है।

दालके बिना खुराकको सब लोग अपूर्ण मानते हैं। मांसाहारीको भी दाल तो चाहिये ही। जिस आदमीको मेहनत-मजबूरी करनी पड़ती है और जिसे पूरी मात्रामें बिलकुल दूध नहीं मिलता। उसका गुजरात दालके बिना न चलेये मैं समझ सकता हूं। मगर मुझे यह कहने के बाद भी अपने लागू इसके बिना चलेये मैं समझ सकता हूं। मगर मुझे यह कहने के बाद भी अपने लागू इसके बिना चलेये मैं समझ सकता हूं।
जिसे घी न मिल सके, वह तेल खाकर चर्चकी मात्रा पूरी कर सकता है। तोतों मिलका, नारियलका और मूँगफलीका तेल अच्छा माना जाता है। तेल ताजा होना चाहिए। इसलिए देशी घानीका तेल मिल सके तो अच्छा है। जो घी और तेल आज बाजारमें मिलता है, वह लघुमत्व निर्ममत्व होता है। यह दुःखकी और शरमकी बात है। मगर जब तक व्यापारियों का नाम या लोक-विश्वसन्त के द्वारा ईमानदारी दाखिल नहीं होती, तब तक लोगोंका सावधानी रखकर, मेहनत करके अच्छी और शुद्ध चाहें प्राप्त करनी होगी। अच्छी और शुद्ध चाहें बनाने के लिए कैसी भी मिले तो उससे कभी संतोष नहीं मिलता। बनावटी घी या खाराब तेल खानेके बदले घी-तेलके बैगर जुगारा करनेका निश्चय ज्यादा पसन्द करने योग्य है।

जैसे खुराकमें चिकनािंकी आवश्यकता होती है, वैसे ही गुड और खाड़की भी। मौठ फलोंसे कफी मिठास मिल जाती है, तो भी तीन तोला गुड या खाड़ लेनेमें कोई हानि नहीं है। मौठ फल न मिले तो गुड और खाड़ लेनेकी आवश्यकता होती है। मगर आजकल मिठाई परदों जाना जरूरी है, यह ठीक नहीं है। शहरोंमें रहनेके बहुत ज्यादा मिठाई खाते हैं, जैसे कि खीर, रबडी, श्रीखुंड, पेंड, बर्फी, जलेबी वैगर मिठाईयां। वे सब अनवस्थक हैं और अधिक मात्रामें खानेसे नुकमान ही करती हैं। जिस देशोंमें कफीके लगभग खरी के पेटभर अन भी नहीं मिलता, वहां जो लोग पकवान खाते हैं, वे चॉरिका माल खाते हैं, यह कहने मुझे तिनकी भी अतिशयोक्ति नहीं लगती।

जो मिठाईके बारेमें कहा गया है, वह घी-तेलको भी लागू होता है। घी-तेलमें तली हुई चीजें खाना बिलकुल जरूरी नहीं है। पूरी, लड्डू वैगर बनानेमें घी खर्च करना विचारित है। जिन्हें आदत नहीं होती, वे लोग तो ये चीजें खा ही नहीं सकते। अंग्रेज जब हमारे देशमें आते हैं, तब हमारी मिठाईयां और धीमे पकाई हुई चीजें वे खा ही नहीं सकते। जो खाते हैं वे बीमार पड़ते हैं, यह मैंने कई बार देखा है। स्वाद तो सिफ़ार आदतकी बात है।

भूख के जूस्वाद पैदा करती है, वह छप्पन भोगोंमें भी नहीं मिलता। भूख भूख सूखी रोटी भी बहुत स्वादसे खायेगा। जिसका पेट भरा हुआ है, वह अच्छे से अच्छा माना जानेवाला पकवान भी नहीं खा सकेगा।

अब हम यह विचार करें कि हमें कितना खाना चाहिए और कितनी बार खाना चाहिए। सब खुराक औषधिके रूपमें लेनी चाहिए, स्वादके खातीर हासिल नहीं। स्वाद मात्र रसमें होता है और रस भूखमें होता है। पेट क्या चाहता है, इसका पता बहुत कम लोगों को रहता है। कारण यह है कि हमें गलत आदतें पड़ गई है।

(8-9'-42)

जन्मदाता माता-पिता कोई त्यागी और संघर्षी नहीं होते। अनकी आदतें ठोंड़े-बहुत प्रमाणमें बच्चोंमें भी उतरती हैं। गर्भधानके बाद माता जो खाती हैं, उसका असर बालक पर पड़ता ही है। फिर बाल्यावस्थामें माता बच्चेको अनेक स्वाद खिलाती है। जो कुछ वह स्वयं खाती है उससे बच्चोको भी खिलाती है। परिणाम यह होता है कि बचनपसे ही पेटको बुरी आदतें पड़ जाती हैं। पड़ी हुई आदतोंके मिटा सकनेवाले विचारशील
लोग थोड़े ही होते हैं। पढ़ी हुई आदतें भिड़ सकते विचारशील लोग थोड़े ही होते हैं। मगर जब मनुष्य यह भाव होता है कि वह अपने शरीर का संरक्षण भी और उसने शरीरिको संरक्षण के लिए अर्थात कर दिया है। तब शरीरिको स्वस्थ रखने का नियम जानने की उसे इच्छा होती है और उन नियमों को पालन करने का वह महत्त्व प्राप्त करता है।

(9-9-’42)
1. गायका दूध दो पौंड।
2. अनाज छह औंस अथवा 15 तोल (चावल, गेहूँ, बाजरा इत्यादि मिलाकर)।
3. शक्में पत्ता-भाजी तीन औंस और दूसरे शक पांच औंस।
4. कच्चा शक एक औंस।
5. तीन तोले घी या चार तोले मक्खन।
6. गुड़ या शककर तीन तोले।
7. ताजे फल, जो मिल सकें, रूचि और आर्थिक शक्ति के अनुसार।
हर रोज दो नीबू लिये जायं तो अच्छा है। नीबूका रस निकालकर भाजीके साथ या पानीके साथ लेनेसे खटाईका दोनों पर खराब असर नहीं पडेगा।
ये सब तब रजन कच्चे अथवा बिना पकाके हुए पदार्थोंके हैं। नमकका प्रमाण यहां नहीं दिया गया है। वह रूचिके अनुसार उपस्थित लिया जा सकता है।
हमें दिनमें कितनी बार खाना चाहिये? भहत लोग तो दिनमें केवल दो ही बार खाते हैं। सामान्यत तीन बार खाने का धार्मिक प्रथा है। सबेरे काम पर बैठने पहले, दोपहरको और शाम या रात्रिको। इससे अधिक बार खाने की आवश्यकता नहीं होती। शहरों में रहनेवाले कुछ लोग समय-समय पर कुद न कुछ खाते ही रहते हैं। यह आदत नुकसानदेह है। आमाशयको भी आखिर आराम चाहिये।

www.mkgandhi.org
5. मसाले

खुराकका विवेचन करते समय मैंने मसालोंके बारे मूल तत्त्व कुछ नहीं कहा। नमकको हम मसालोंका राजा कह सकते हैं, क्योंकि नमकके बिना सामान्य मनुष्य कुछ खाही नहीं सकता। इसलिए, नमकको 'सबसे' भी कहा गया है। शरीरको कई शारीरिक आवश्यकता रहती है। उनमें से नमक भी एक है। ये सब धारण खुराकमें होते ही हैं।

मगर उसे अधिकांशतः तरीके से पकानेके कारण कुछ शारीरिक मात्रा कम हो जाती है, इसलिए वे उपस्थ लेने पड़ते हैं। ऐसा ही एक अत्यन्त आवश्यक धारण नमक है। इसलिए उसे थोड़े प्रमाणमें अलगासे खानेको मैंने पिछले प्रकारणमें कहा है।

मगर कई ऐसे मसाले, जिनकी शरीरको सामान्यत तो आवश्यकता नहीं होती, केवल स्वादके खातिर या पाचन-शक्ति बढ़ानेके खातिर लिये जाते हैं, जैसे कि हरी या सूखी लाल मिर्च, काली मिर्च, हल्दी, धनिया, जीरा, राइ, मेथी, हींग इत्यादि। इनके विषयमें पचास वर्षके निजी अनुभवसे मेरी यह राय बनी है कि शरारतों की पूरी तरह निरोग रखनेके लिए इनमें से एककी भी आवश्यकता नहीं है। जिसकी पाचन-शक्ति बिलकूल मजबूर हो गई है, उसे केवल औषधिके रूपमें, अमूक समयके लिए, निषिद्ध मात्रामें मसाले लेने पड़े तो वह भले ले।

मगर स्वादके खातिर तो ऐसी चीजका आग्रहपूर्वक निषेध ही मानना चाहिये। हर प्रकारका मसाला, यहां तक कि नमक भी, अनाज और शाकके स्वाभाविक रसका नाश करता है। जिस आदमीकी जीभ बिंदु नहीं गई है, उसे स्वाभाविक रसमें जो स्वाद आता है, वह मसाला या नमक डालनेके बाद नहीं आता। इसलिए, मैंने सूचना की है कि नमक लेना हो तो ऊपरसे लिया जाय। मिर्च तो फेट और मुक्को जलाती है। जिसे मिर्च खानेकी आदत नहीं होती, वह शुरूमें तो उसे खा ही नहीं सकता। मैंने देखा है कि मिर्च खानेसे कई लोगोंका मुख आ जाता है-उसमें था, अपनी भरजानी में इसी कारण मृत्युका शिकार भी बना था।

दक्षिण अफ्रीकाके हबाशी तो मिर्चका छू भी नहीं सकते। सूरकमें हल्दीका रंग वे बरदास्त ही नहीं कर सकते। अंग्रेज भी हमारे मसाले नहीं खाते हिन्दुस्तानमें अंतर्गत हुए भी अदात पड़ जाय तो बात अलग है।
6. चाय, काफी और कोको

इन तीनोंमें से एककी भी शरीरको आवश्यकता नहीं है | चायका प्रचार चीनसे हुआ कहा जाता है | चीनमें उसका खास उपयोग है | वहाँ पानी अक्सर शुद्ध नहीं होता | पानीको उबाल कर पिया जाय तो पानीका विकार दूर किया जा सकता है | किसी चातुर चीनने चाय नामकी एक घास ढूंढ निकाली | वह घास बहुत थोड़ी मात्रामेंं भी उबलते पानीमें डाली जाय, तो पानीका रंग सुनहरा हो जाता है | अगर इस तरह पानी सुनहरा रंग पकड़ ले, तो यह इस बातकी पक्की तिमाही है कि पानी उबल चुका है | सुना है कि चीनमें लोग इसी तरह पानीकी परीक्षा करते हैं और वही पानी पीते हैं | चायकी दूसरी विशेषता यह है कि उसमें एक तरहकी खुशबू रहती है | ऊपर लिखे तरीकसे बनी हुई चायको निदोष मान सकते हैं ऐसी चाय बनानेका यह तरीका है : एक चम्मच चाय छलनीमें डाली जाय छलनीको चायके बर्तन पर रखा जाय छलनी पर पीर-धीर उबला हुआ पानी डाला जाय | नीचे जो पानी आये असका रंग सुनहरा हो, तो समझ ले कि पानी ठीक उबल चुका है | इसी चाय सामान्यत रीत जाती है, उसका कोई गुण तो जाननेमें नहीं आया | मगर उसमें एक भारी दोष होता है | अर्थात् उसमें टेनीन होता है | टेनीन ऐसी चाय है, जो चमडेको पकानेके काममें आती है | यही काम टेनीनवाली चाय आमशाय (Stomach) में जाकर करती है |

(10-9-'42)

अमाशाके भीतर टेनीनकी तह चढनेसे उसका पाचन-शाक्ति कम होती है | इससे अपच होता है | कहाजाता है कि इंस्क्रेडमें तो असरज औरतें केवल कडक चायकी आदतके कारण अनेक रोगोंकी शिकार बनती हैं | जिन्हें चायकी आदत हैं, उन्हें समय पर चाय न मिले, तो वे व्यक्तकुल हो जाते हैं | चायका पानी गरम होता है | उसमें थोड़ी चीनी और गुड़ डाला जाता है | यह चायका गुण जबर माना जा सकता है | मगर उसकी पानी दालकर उसे गरम किया जाय और उसमें चीनी या गुड़ दाला जाय, तो उससे वही काम अच्छी तह निकलता है | उबलते पानीमें एक चम्मच शहद और आरोग्य चम्मच नीबूकी रस डाला जाय, तो सुनदर पेय बन जाता है | जो चायके विषयमें कहा गया है, वह कॉफीको भी थोड़े-बहुत प्रमाणमें लागू होता है | कॉफीके बाबरोंमें एक कहावत है:

कन्फ्युल्ट बायुरण, धातुहीन बलश्रीण;
लोहूका पानी करे, दो गुण अवगुण तीन।

जो राय में चाय और कॉफीके बाबरों में दी है, उसे चाय, कॉफी और कोकोकी मददकी आवश्यकता नहीं रहती।

www.mkgandhi.org
अपने लंबे अनुभव पर से मैं यह कह सकता हूँ कि तन्दुरुस्त मनुष्य को सामान्य खाद्यकसे पूरा संतोष मिल जाता है। मैंने उपयुक्त तीनों चीजोंको खूब सेवन किया है। जब मैं ये चीजें लेता था, तब शरीरमें कुछ न कुछ बिगाड़ रहा ही करता था। इन चीजोंके त्यागसे मैंने कुछ भी खोया नहीं है, उलटा बहुत पाया है। जो स्वाद मुझे चाय इत्यादि में मिलता था, उससे काफी अधिक स्वाद अब मैं उबली हुई सामान्य भाजियोंके रसमें पाता हूँ।
7. मादक पदार्थ

हिन्दुस्तानमें शराब, भांग, गांजा, तमबाकू और अफीम मादक पदार्थोंमें गिने शराबमें इस देशमें पैदा होनेवाली
tाड़ी और ‘एक’ आते हैं; और परदेशसे आनेवाली शराबोंका तो कोई हिसाब ही नहीं है। ये सर्वथा त्याज्य हैं।

(8-10-’42)
शराब शराब पीकर मन शोषी अपने होश खो बैठता है और निकम्मा बन जाता है। जिसको शराबकी लत लम्बी
होती है, वह खुद बरबाद होता है और अपने परिवारको भी बरबाद करता है। वह सब मयादानें तेज़ देता है।
एक पक्ष ऐसा है जो निश्चित (मयादित) मात्रामें शराब पीनेका समर्थन करता है और चहता है कि इससे सलाह
hोता है। मुझे इस दलीलमें कोई सार नहीं लगता। पर घड़ीभरके लिए इस दलीलको मान लें, तो भी अनेक
ऐसे लोगोंके खातिर, जो कि मयादामें रह ही नहीं सकते, इस चीज़का त्याग करना चाहिये।
पाससे भाइयोंने ताड़ीका बहुत समर्थन किया है। वे कहते हैं कि ताड़ीमें मादकता तो है, मगर ताड़ी एक खुराक
है और दूसरी खुराकको हजार में मदद पैरवाली है। इस दलील पर मैंने खूब विचार किया है और इस
बारेमें काफी भाव भी है। मगर ताड़ी पीनेवालों बहुतसे गरीबोंकी मैंने जो दूर्शा देखी है, उस दृष्टि से मैं इस निर्णय
पर पहुँच हूँ कि ताड़ीको मनुष्यकी खुराकके स्थान देनेकी बोई आवश्यकता नहीं है।
ताड़ीमें जो गुण माने गए हैं, वे सब हमें दूसरी खुराकमें मिल जाते हैं। ताड़ी खजूरीके सरसे नीर
निकल सकती है। खजूरीके गुण गृहमें मादकता बिलकुल नहीं होती। उसे नीर बनते हैं। ताड़ी नीरको ऐसीकी ऐसी पीनेसे कई लोगोंको
dस्त साफ़ आता है। मैंने खुद नीर पीकर देखी है। मुझे उसका ऐसा असर नहीं हुआ। परन्तु वह खुराकका
काम तो अच्छी तरह देता है। चाव इत्यादिके बदले मनुष्य सर्वोत्तम नीर पी ले, तो उसे दूसरा कुछ पीने या
खानेकी आवश्यकता नहीं रहनी चाहिये। नीरको गन्ने के रसकी तरह पकाया जाय, तो उससे बहुत अच्छा गुड़
तैयार होता है।

(9-10-’42)
खजूरी ताड़ी में एक क्रिस्म है। हमारे देशमें अनेक प्रकारके ताड़ कुदरती तौर पर उगते हैं। उन सबमें से नीरा
निकल सकती है। नीरा ऐसी चीज है जिसे निकालनेकी जगह पर ही तुरुत पीना अच्छा है। नीरामें मादकता
जल्दी पैदा हो जाती है। इसलिए जहाँ उसका पुरात पाया न हो सके, वहां उसका गुड़ बना लिया जाय तो
वह गन्नेके गुड़की जगह ले सकता है। कई लोग मानते हैं कि ताड़-गुड़ गन्नेके गुड़की अपेक्षा अधिक मात्रामें
आरोग्य की कुंजी

खाया जा सकता है। प्रामोदीय संघेके द्वारा ताड़-गुड़का काफी प्रचार हुआ है। मगर अभी और ज्वादा माट्रों इसका प्रचार होना चाहिये। जिन ताड़ों के रससे ताड़ बनाई जाती है, उन्होंने गुड बनाया जाये, तो हिन्दुस्तानमें गुड और खांडी की कभी तंगी पैदा न हो और गरीबोंको सस्ते दाममें अच्छा गुड मिल सके। ताड़-गुड़की मिथ्री और गरीबोंको सस्ते दाममें अच्छा गुड मिल सके। ताड़-गुड़की मिथ्री और सक्कर भी बनाई जा सकती है।

मगर गुड शक्कर वा चीनीसे बहुत अधिक गुणकारी है। गुडमें जो श्यार हैं वे शक्कर या चीनीसे बहुत अधिक गुणकारी है। गुडमें जो श्यार हैं वे शक्कर या चीनिमें नहीं होते। जैसे बिना भूसीका आटा और बिना भूसीका चावल होता है, वैसे ही बिना शक्करके शक्करको समझना चाहिये। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि खुराक जितनी अधिक स्वाभाविक स्थितिमें खाई जाय, उतना ही अधिक पाण्य उससे हो सकता है।

ताड़ीका चरण करते हुए मुझे स्वभावत नीरका उल्लेख करना पड़ा और उसके संबन्धमें गुड़का। मगर शराबके बोरयसे मुझे अभी और कहना है। शराबसे पैदा होनेवाली बुराईका जितना कड़वा अनुच्छ मुझे हुआ है, मैं नहीं जानता कि उसना स्वाजाऊनक काम करनेवाले किसी और सेवकको हुआ होगा। दक्षिण अफ्रीकाके ‘विगरमिट’ (अर्ध-गुलामी) में काम करनेवाले हिन्दुस्तानियोंमें बहुतसे शराब पीनेके आदी होते थे। वहां यह कानून था कि हिन्दुस्तानी प्रभाव अपने घर नहीं ले जा सकते। जितनी पीना हो, शराबकी दुकान पर बैठकर पीये। शिखां भी शराबकी शिकार बनी होती थीं। उनकी जो दशा मैंने देखी है, वह अत्यन्त रुपयानकनक थी। जो उसे जानता है वह कभी शराब पीनेकी मनसभ नहीं करेगा।

वहांके अंग्रेजोंको सामान्य अपनी मूल स्थितिमें शराब पीनेकी आदत नहीं होती। कहा जा सकता है कि उनके मजदूरवर्गको तो शराबने नाश ही कर दिया है। कई मजदूर अपनी कमाई शराबमें स्वाहाके करते दिखाई देते हैं। उनका जीवन पिरस्क बन जाता है।

और अंग्रेजोंका? सभ्य माने जानेवाले अंग्रेजोंके मैंने गाटरोंमें पड़े देखा है। यह अतिशयोक्ति नहीं है। लड़िके समय जिन गरोंको ट्रांसवाल छोड़ना पड़ा था, उसमें से एकको मैंने अपने घरमें रखा था। वह इन्जीनियर था। थियोसोफिस्ट होते हुए भी उसे शराबकी लत थी। शराब न पी हो तब उसके सब लक्षण अच्छे रहते थे। लेकिन जब वह शराब पी लेता था, तब बिलकुल दीवाना बन जाता था। उसने शराब छोड़नेके बहुत प्रयत्न किया, मगर जहां तक मैं जानता हूँ, वह अन्त तक इसमें सफल न हो सका।

दक्षिण अफ्रीकासे वापिस हिन्दुस्तानमें आकर भी मुझे शराबके दुखद अनुभव ही हुए हैं। जिन्हें ही राजा-महाराजा शराबकी बुरी आदतके कारण बिराज हो गये हैं और हो रहे हैं। जो उनके विषयमें सच है, वह थोड़े-बहुत प्रमाणमें अनेक धनिक युवकोंको भी लागू होता है।
अरोग्य की कुंजी

(10-10-’42)

मजदूर-वर्गीय स्थितिका अभ्यास किया जाय, तो वह भी दयाजनक ही है। ऐसे कड़वे अनुभवोंके बाद में शराबका सहज निरोधी बना हूँ, तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है।

एक वाक्यमें यदि कहूँ तो शराबसे मनुष्य अपने शरीर, मन, और बुद्धिको क्षीण करता है और पैसा बरबाद करता है।
8. अफीम

जो टीका शाराबखोरीके विषयमें की गई है, वही अफीम पर भी लागू होती है। दोनों व्यसनोंमें भेद ज़रूर है।

शाराबका नशा जब तक रहता है मनुष्यको वह पागल बनाये रखता है। अफीम मनुष्यको जड़ बना देती है। अफीम आलसी हो जाता है, तन्द्रावश रहता है और किसी कामका नहीं रहता।

शाराबखोरीके बुरे परिणाम हम रोज अपनी आंखोंसे देख सकते हैं। अफीमका बुरा असर इस तरह प्रत्यक्ष नहीं दिखाता। अफीमका जहाँलता असर प्रत्यक्ष देखना हो। तो उड़ीसा और आसामके जंकर हम देख सकते हैं।

वहां हजारों लोग इस दुर्घटनामें फंसे हुए दिखाई देते हैं। जो लोग इस व्यसनके शिकार बने हुए हैं, वे ऐसे लगते हैं मानों कब्रमें पैर लटककर बैठे हों।

मगर अफीमका सबसे खराब असर तो चीनमें हुआ कहा जाता है। चीनीयोंका शरीर हिंदुस्तानियोंके ज्यादा मजबूत होता है। परंतु जो अफीमके फंदेमें फंस चुके हैं, वे मुर्दे-से दिखाई देते हैं। जिनको अफीमकी लत लगी होती है, वह दीन बन जाता है और अफीम हासिल करनेके लिए कोई भी पाप करनेके तैयार हो जाता है।

चीनिीयों और अंगोंके बीच एक लड़ाई हुई थी, जो अफीमकी लड़ाईके नामसे इतिहासमें प्रसिद्ध है। चीन हिंदुस्तानकी अफीम लेना नहीं चाहता था, जब कि अंगों जबरदस्ती चीनके साथ उस अफीमका व्यापार करना चाहते थे। इस लड़ाईमें हिंदुस्तानका भी दोष था। हिंदुस्तानमें बहुतसे अफीम ठकेरदार थे। इससे उन्हें अच्छी चमाई भी होती थी। हिंदुस्तानकी महसूलमें चीनसे चरोंझी रुपये मिलते थे। यह व्यापार प्रत्यक्ष रुपमें अनीतिमय था तो भी चला। अन्तमें इंग्लैंडमें भारी आन्दोलन हुआ होर अफीमका यह व्यापार बन्द हुआ।

जो चीज इस तरह प्रजका नाश करनेवाली है, उसका व्यसन क्षणभरके लिए भी सहन करने योग्य नहीं है।

इतना कहनेके बाद भी यह स्वीकार करना चाहिए कि वैद्यक या चिकित्सा-शास्त्रमें अफीमका बहुत स्थान है।

वह ऐसी दवा है जिसके बिना चल ही नहीं सकता। इसलिए अफीमका व्यसन मनुष्य स्वेच्छासे छेड़ दे तभी उसका उद्दार हो सकेगा।

(11-10-'42)

चिकित्सा-शास्त्रमें उसका स्थान भले ही रहे। परंतु जो चीज हम दवाके तीर पर ले सकते हैं वह व्यसनके तीर पर थोड़े ही ले सकते हैं? अगर तो तो वह जहांका काम करेगी। अफीम तो प्रत्यक्ष ज़हर ही है। इसलिए व्यसनके रुपमें वह सर्वथा त्याज्य है।
9. तम्बाकू

तम्बाकू के तो गजब ही ढाया है। इसके पंजेरे कोई भायसे ही छूटता है। सारा जगत एक या दूसरे रूपमें तम्बाकू का सेवन करता है। तॉल्स्टॉय ने इसे व्यस्तपन्ने यथे सर्वे खार व्यस्त माना है। प्रथिक्षा यह वचन ध्यान देने लाख है। उन्होंने तम्बाकू और शराब दोनों काफी अनुभव किया था और दोनों के हानियों वे स्वयं जानते थे। ऐसा होते हुए भी मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि शराब और अफीमकी तरह तम्बाकू के उत्पत्ती रूपसे मैं स्वयं बता नहीं सकता। इस जवस कह सकता हूँ कि इसका एक भी फायदा मैं नहीं जानता। जो इसका सेवन करते हैं उनके सिर इसका खर्च भी खूब पड़ता है। एक अंग्रेज मिलियंटटें तम्बाकू पर हर महीने पांच पौंड अथवा 75 रूपये खर्च करता था। उसका महत्त्व वेतन था 25 पौंड। दूसरे शब्दों में, अपनी कमाई का पांचवाँ भाग अर्थतः बीस प्रतिशत वह घूमे उठा देता था।

तम्बाकू पीने-लेकर शलक्त इसी कारण है कि वह तम्बाकू पीते समय अपने पदोसी का विचार नहीं करता। रेलगाड़ी में मसाफ़त करनेवालों को इस चीज़ के अनुभुक होता है। जो तम्बाकू नहीं पीते, वे तम्बाकू के धुआं सहन ही नहीं कर सकते। मगर तम्बाकू पीनेवालों के अकेले धूमना पड़ता है। उन्होंने तम्बाकू और शराब को अकेले अनुभव किया था। उसके साथ तम्बाकू पीने-लेकर कोई भी धूमना नहीं करते। उन्होंने तम्बाकू पीने-लेकर अपनी अनुभुति भी धूमे उठा देते हैं।

तम्बाकू पीने-लेकर के असह्य बदबू लगता है। सुंभियाँ हैं कि तम्बाकू पीने-लेकर मेरे उपर उसके बीतने पर मर जाते हैं। और यह भी संभव है कि उन्हें मारने के लिए ही मनुष्यन तम्बाकू पीने का भूत्तियाँ किया हो। इसमें तो शक है है कि तम्बाकू पीने-लेकर के एक तरहसे नशा चढ़ जाता है। और इसके उपर न्त: दो अनुभवकर खुद भी उसकी दुःखों के लिए ही मनाये दिखलाये हैं। इसके उपर तम्बाकू पीने-लेकर की सफलता ऐसी है कि उन्होंने तम्बाकू पीने के लिए एक योग विकसित किया है। उसके पारसे भयुंकर काम करते थे। यह काम करने-पहले उसे शराब पिलाते थे। इस पात्रों से एक भयुंकर खुन करना है। मगर शराबके नशे में भी उसे खून करने में सक्षम होता है। विचार करने-पहले वह सिगार जलाता है और धूआं उड़ाता है। धूंके ऊपर चढ़े-पहुँच ले हो देखता है और देखते-देखते बोल उठता है। "मैं कैसा दर्पण हूँ! खून करना यदि करते हूँ, तो फिर संक्रमण क्यों? चल उठ, और अपना काम कर।" इस तरह उसकी धूम्रपान विचारित बनी बृहदि उससे एक निदोष आदर्शका खून करवानी है। मैं जानता हूँ कि इस दलीलका बहुत असर नहीं पड़ सकता।

तम्बाकू पीने-लेकर सबके सब पापी नहीं होते। यह कहा जा सकता है कि करोड़ों तम्बाकू पीने-लेकर लोग आपना जीवन सामाजिक सरलतासे व्यतीत करते हैं। और भी जो विचारशील हैं उन्हें उपयोग द्वारा पर मनन करना चाहिए। टॉल्स्टॉयके कहने का सार है कि तम्बाकूके नशे में मनुष्य छोटे-छोटे पाप किया करता है। उसकी विवेकबुद्धि मनद पड़ जाती है।
हिन्दुस्तानमें हम लोग तम्बाकू केवल पीते ही नहीं, सूंघते भी हैं और जर्देके रूपमें खाते भी हैं। कुछ लोग मानते हैं कि तम्बाकू सूंघनेसे फायदा होता है। वैद्य और हकीमकी सलाहसे वे तम्बाकू सूंघते हैं। मेरा मत यह है कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। तन्दुस्त मुतुष्पौंकों ऐसी त्रीजंकी आवश्यकता होनी ही नहीं चाहिए।

जरदा खानेवालोंको तो कहना ही क्या? तम्बाकू पीना, सूंघना और खाना, इन तीनोंमें तम्बाकू खाना सबसे गन्दी चीज है। इसमें जो गुण माना जाता है, वह केवल भ्रम है।

हम लोगोंमें एक कहावत प्रचलित है कि खानेवाला कोना, सूंघनेवाला कपडा और पीनेवाला पर ये तीनों समान हैं। जरदा खानेवाला सावधान होता है और तम्बाकू पीता नहीं, अचानक लोग अपने पास कोनों और दिवारों पर थूकते हैं। पीनेवाले लोग धुंसे अपना घर भर देते हैं और नसवार सूंघनेवाले अपने कपडे बिगाड़ते हैं। कोई-कोई लोग अपने पास स्वास्थ्य रखते हैं, पर वह अपवाद नहीं है। आयुर्वेदिक पुजारी दूध निष्ठुर करके सब व्यस्तोंकी गुलामीसे छूट जायेगा। बहुतोंको इनमेंसे एक या दो या तीन व्यस्तोंकी गुलामीसे छूट जायेगा। बहुतोंको इनमेंसे एक या दो या तीनों व्यस्त लगे होते हैं। इसलिए, उन्हें इससे घृणा नहीं होती।

मगर शानचतुर विचार किया जाय, तो तम्बाकू पुंजा फ्रीकी क्रियामें लगभग सारा दिन जरदे या पानके बीड़े वापसें गाल भर रखनेमें या नसवारकी डिब्बियां खोलकर सूंघते रहनेमें कोई शोभा नहीं है। ये तीनों व्यस्त गंदे हैं।
10. ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्यका मूल अर्थ है ब्रह्मकी प्राणिके लिए चर्या। संयमके बिना ब्रह्म मिल ही नहीं सकता। संयममे सबोपरी स्थान इन्द्रियग्रहनका है। ब्रह्मचर्यका सामान्य अर्थ श्री-संगका त्याग और बीर्य-संग्रहकी साधना समझा जाता है। सब इन्द्रियोंका संयम करनेवालेके लिए बीर्य-संग्रह सहज और स्वाभाविक क्रिया हो जाती है। स्वाभाविक रीतिसे क्रिया हुआ बीर्य-संग्रह ही इच्छित फल देता है। ऐसा ब्रह्मचारी क्रोधादिरेष्ट मुक्त होता है। सामान्यत जो लोग ब्रह्मचारी कहे जाते हैं, वे क्रोधी और अहंकारी देखनेमें आते हैं, मानो उन्होंने क्रोध और अभिमान करनेका ठका ही ले लिया हो।

यह भी देखनेमें आता है कि जो ब्रह्मचर्य-पालनके सामान्य नियमोंकी अवगतना करके बीर्य-संग्रह करनेकी आशा रखते हैं, उन्हें निराश होना पड़ता है; और कुछ तो दीवाने-जैसे बन जाते हैं। नूसे निस्तेज देखनेमें आते हैं। वे बीर्य-संग्रह नहीं कर सकते और केवल श्री-संग न बननेके सफल हो जाने पर आपने आपको कृत्यार्थ समझते हैं। श्री-संग न करनसे ही कोई ब्रह्मचारी नहीं बन जाता। जब तक श्री-संगमे रस रहता है; तब तक ब्रह्मचर्यकी प्राणिवरी नहीं कही जाती। जो श्री। या पुरुष इस रसको जलाना सकता है, उसकी बलोंमें कहाँ सकता है कि उसने अपनी जननेवत्र लिए ब्रज गान कर ली है। उसकी बीर्यरक्ता इस ब्रह्मचर्यका वाणीमे, विचारमें और आचारमें एक अनोखा प्रभाव देखनेमें आता है।

ऐसा ब्रह्मचर्य खिरोंका साथ पवित्र संबन्ध रखनेसे या उनके आवश्यक स्पर्शसे भेंग नहीं होगा। ऐसे ब्रह्मचारियोंके लिए श्री। और पुरुषका भेंग मिट-सा जाता है। इस वात्यका कोई अवसर न रहे। इसका उपयोग स्वेच्छाचार का प्रणालि करनेके लिए कभी नहीं होना चाहिए। जिसकी विश्वासकं प्रयत्न क्रक्षा हो गई है, उसके मनमें श्री-पुरुषका भेंगमिट होता है, मिट जान चाहिए। उसकी सदुर्दर्शी कल्पना भी दूसरा ही रूप ले लेती है। वह बाहरके आकारको देखता ही नहीं। जिसका आचार सुन्दर है, वही श्री। या पुरुष सुन्दर है। इसलिए सुन्दर श्री को देखकर वह विश्वास नहीं बन जायेगा। उसकी जननेवत्र भी दूसरा रूप ले लेगी, अर्थात् वह सदले लिए विकार-रहित बन जायेगी। ऐसा पुरुष बीर्यहीन होकर नपुसक नहीं बनेगा, मगर उसकी बीर्यका परिवर्तन होनेके कारण वह नपुसक नहीं बनेगा, मगर उसके बीर्यका परिवर्तन होनेके कारण वह नपुसक-सा लगेगा। सुना है कि नपुसकके रस झलकते ही नहीं। युवंत प्रत लिखनेवालोंसे कहीं इस बातकी साक्षी दी है कि वे चाहते तो हीं कि उनकी जननेवत्राय जात्र हो, मगर वह होती नहीं। पिर भी बीर्य-स्खलन हो जाता है। उनमें विश्वय-रस तो रहता ही है। इसलिए वे अन्दर जलते रहते हैं। ऐसा पुरुष-रस तो रहता ही है। इसलिए वे अन्दर और अन्दर जलते रहते हैं। ऐसा पुरुष क्षीणवीर्य होकर नपुसक हो गया है, या नपुसक नजरले क्रीडयारी कर रहा है। यह दयनीय स्थिति है। परन्तु जो रस मात्रके भरसे हो जानेसे उदयविरत हो गया है, उसका ‘नपुसकत्व’ विलकुल अलग ही क्रिकनका होता है। वह सबके लिए इत्यादी है। ऐसे ब्रह्मचर्य-पालनका प्रत 1906 में लिया था, अर्थात् मेरा इस दिशामें
छतीस वर्षका प्रयत्न है। परन्तु मैं ब्रह्मचर्यकी अपनी व्याख्याको पूर्णतया पहुंच नहीं सका हूं। तो भी मेरी दृष्टिसे इस दिशामें मेरी अच्छी प्रगति हुई है और ईश्वरकी क्रोध होगी तो पूर्ण सफलता भी शायद यह देह छूटनसे पहले मिले जाय। अपने प्रयत्नमें मैं कभी ठीकता नहीं पड़ा। मैं इतना जानता हूँ कि ब्रह्मचर्यकी आवश्यकताके बारेमें मेरे चित्त ज्ञानादा दूर बने है। मेरे कुछ प्रयोग समाजके सामने रखनेकी स्थितिको प्राप्त नहीं हुए हैं। मुझे सन्तोष हो इस हद तक अगर वे सफल हो जायेंगे, तो मैं उनें समाजके सामने रखनेकी आशा रखत था; क्योंकि मैं मानता हूँ उनकी सफलतासे पूर्ण ब्रह्मचर्य शायद अनेकाकृत सरल बन जायेगा।

इस प्रकरणमें जिस ब्रह्मचर्य पर मैं जोर देना चाहता हूँ, वह वीर्य-रक्षा तक ही सीमित है। पूर्ण ब्रह्मचर्यका अमोघ लाभ उससे नहीं मिलेगा, तो भी उसकी कीमत कुछ कम नहीं है।

(11-12-'42)

उसके बिना, पूर्ण ब्रह्मचर्य असंभव है। और उसके बिना, पूर्ण आरोग्यकी रक्षा भी अशक्य-सी समझना चाहिये। जिस वीर्यसे दूसरे मनुष्यको पैदा करनेकी शक्ति है, उस वीर्यका व्यर्थ स्वतंत्र होने देना महान अवधारकी निशानी है। वीर्यका उपयोग भोगके लिए नहीं, परन्तु केवल प्रजोत्साहितके लिए है, यह हम पूरी तरह समझ लें तो विषय-वस्तुके के लिए जीवनमें कोई स्थान ही न रह जायेगा। सी-पुष्प-संप्रेक्ष अखिल नर-नारी दोनों जिस तरह आज अपना सत्यापन करते हैं, वह बंद हो जायेगा, विवाहका अर्थ ही बदल जायेगा और उसका जो स्वरूप आज देखके आता है, उसकी तरफ हमारे मनमें जिसरका पैदा होगा। विवाह सी-पुष्पके बीच हार्दिक और आत्मिक ऐक्यकी निशानी होना चाहिये। विवाहही सी-पुष्प यदि प्रजोत्साहितशुष्क हो उसके बिना कभी विषय-भोगका चित्त तक न करें तो वे पूर्ण ब्रह्मचारी माने जानेके लिए है। ऐसा भोग दोनोंकी इच्छा होने पर ही जाना है। वह आवश्यक आकर नहीं होगा, कामान्यकी पृथियों लिए तो कभी नहीं। मगर उसे कर्त्तव्य मानकर किया जाय, तो उसके बाद फिर भोगकी इच्छा भी पैदा नहीं होनी चाहिये। मेरी इस बातको कोई हास्यास्पद न समझ। पाठकोंको यदि रखना चाहिये कि छतीस वर्षके अनुभवके बाद मैं यह सब लिख रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि जो कुछ मैं लिख रहा हूँ, वह सामान्य अनुभवसे उत्तर है। ज्यों-ज्यों हम सामान्य अनुभवसे आगे बढ़ते हैं, त्यों-त्यों हमारी प्रगति होती है। अनेक अच्छी-जरूरी शोधसे सामान्य अनुभवके विरुद्ध जा कर ही हो सकी है। चकमकसे दियासलाई और दियासलाईसे विज्ञानकी शोध इसी एक जीवनकी आभारी है। जो बात भौतिक वस्तु पर लागू होती है, वहीं आत्मिक पर भी लागू होती है। पूर्वकालमें विवाह-जैसी कोई वस्तु थी ही नहीं। सी-पुष्पके भोग और पशुओंके भोगमें कोई फरक न था। संस्कृत-जैसी कोई वस्तु थी ही नहीं। कई साहसी लोगोंसे सामान्य अनुभवसे बाहर जा कर संस्कृत-धर्मकी शोध की। संस्कृत-धर्म कहां तक जा सकता है; इसका प्रयोग करनेका हम सबका अधिकार है और ऐसा करना हमारा कर्त्तव्य भी है। इसलिए मेरा कहना यह है कि मनुष्यका कर्त्तव्य खी-पुष्प संगों मेरे सुझाव हुई उच्च क्षण तक पहुँचानेका है। यह हस्तियों उड़ा
देने जैसी बात नहीं है। इसके साथ ही मेरी यह भी सूचना है कि यदि मनुष्य-जीवन जैसा गढ़ा जान चाहिये तो वीर्य-संग्रह स्वाभाविक वस्तु हो जानी चाहिये।

नित्य उपयोग होनेवाले अपने वीर्यका हमें अपनी मानसिक, शारीरिक और आध्यात्मिक शक्तियों का बढ़ाने में उपयोग करना चाहिये। जो ऐसा करना सीख लेता है, वह प्रमाणपद्म बहुत कम क्षुरूकसे अपना साही बना सकेगा। अल्पाहरी होते हुए भी वह शारीरिक ध्रम निस्तैसे कम नहीं रहेगा। मानसिक ध्रम उसे कमसे कम धकान लगेगी। बुद्धप्रेम सामान्य चिंता ऐसे ब्रह्मचारी में देखने न करेंगे। जैसे पकड़ हुआ पत्ता या फल वृक्षकी रहनी परसे सहज ही गिर पड़ता है, वैसे ही समय आने पर मनुष्यका सारी शक्तियां रखते हुए भी गिर जायेगा। ऐसे मनुष्यका सारी समय बीतने पर देखनेमें नहीं आते, उसके ब्रह्मचारीमें उनकी कमी समझनी चाहिये। उसने वीर्य-संग्रहकी कला हस्तगत नहीं ही है। यह सब सच हो- और मेरा दावा है कि सच है- तो आरोग्यकी सच्ची कुंजी वीर्य- संग्रहमें है।

वीर्य-संग्रहके जो धोड़े-बहुत नियम में जाननें हूँ, उन्हें यहाँ देता हूँ:

(12-12-'42)

1. विकासमात की जड विचारमें है। इसलिए विचारों पर हमें काबू पाना चाहिये। इसका उपाय यह है कि मनको कभी खाली रहनेकी न होवे या उन्हें निरूपित करनेकी चाहिये। अथवा हम जिस कामभरे हों उसके साथ बायको ही यह चाहिये कि वैसे उसमें निरुचित पायी जा सकती है, और उस पर अमल करें। विचार और उसका अमल विकार करें। परतु हर समय काम नहीं होता। मनुष्य ध्यान है, उसका शरीर आराम चाहता है। रातमें जब नींद नहीं आती तब विकारका हमला हो सकता है। ऐसे प्रसंगोंके लिए सबोपरि साधन जप है। भगवानका जिस रूपमें अनुभव किया हो, या अनुभव करनेकी धारणा रखी हो, उस रूपक होते हुए रखकर उस नामका जप किया जाए। जप चल रहा हो तब दूसरा कोई विचार मनमें नहीं होना चाहिये। यह एक आदर्श स्थिति है। वहाँ तक हम न पहुँच सके और अनेक विचार बुलाये बढ़ाई किया करें, तो उसने हार्स नहीं चाहिये, परतु श्रद्धापूर्वक जप जपते रहना चाहिये; ऐसा करने तो जरूर हमें विजय मिलेगी।

2. विचारकी तरह वाणी और वाचन भी विकारोंको मान करनेवाले होने चाहिये। जिसको बीमार्य विचार नहीं आते, उसके मुंहसे बीमार्य वचन निकल ही नहीं सकते। विषयोंका पोषण करनेवाला काफी साहित्य पढ़ा हुआ है। उसकी तफ मनको कभी जाने नहीं देना चाहिये। सदृश्य या पने कामसे सम्बन्ध रखनेवाले गंध पढ़ने चाहिये और उनका मनन करना चाहिये। गणितविदका यहाँ बड़ा स्थान है। यह तो स्पष्ट है कि जो मनुष्य विकारोंका सेवन नहीं करना चाहता, वह विकारोंका पोषण करनेवाले ध्येयका त्याग करेगा।
3. जैसे मनको काममें लगायें रखनेकी आवश्यकता है, वैसे ही शरीरको भी काममें लगायें रखना जरूरी है।

4. जैसे मनको काममें लगायें रखनेकी आवश्यकता है, जो मनुष्य आहारमें कोई विवेक या मर्यादा ही नहीं रखता, वह अपने विकारोंको गुलाम है। जो स्वादको नहीं जीत सकता, वह कभी भी जितेतीन्द्र नहीं हो सकता। इसलिए मनुष्यकृति और अत्याहारी बनाना चाहिये। शरीर आहारके लिए नहा। आहार शरीरके लिए है। शरीर आपने-आपको पहचाननेके लिए हमें मिला है। अपने-आपको पहचानना अर्थतः एक दृष्टि प्राप्त करना। इस पहचानको जिसने अपना फरम विरय बनाया है, वह विकारक्षा नहीं होगा।

5. प्रत्येक श्री को माता, बहन या पत्नीकी तरह देखना चाहिये। कोई पुरुष अपनी मां, बहन या पत्नीको कभी विकारी दृष्टिसे नहीं देखेंगे। श्री प्रत्येक पुरुषकी अपने पिता, भाई या पत्नीकी तरह देखें।

इन पांच नियमोंमें सब नियमोंका समावेश हो जाता है। अपने दूसरे लेखोंमें मैंने इससे अधिक नियम लिये हैं। मगर उन सबका समावेश इन पांचोंमें हो जाता है। इन नियमोंका पालन करनेवालेके लिए महान विकारों की जितना बहुत सरल हो जाना चाहिए। जिसे ब्रह्मचर्य-ब्रह्मचर्यके पालनकी लागत लगी है, वह ऐसा मानकर कि यह तो असंभव बात है। यह मानकर कि इसका पालन करनेको कोई बिल्कुल ही बिल्कुल ही नहीं हो सकता। जो यह ब्रह्मचर्यके पालनमें है, वह दूसरी किसी चीजमें नहीं है। और जो मनुष्य विकारको गुलाम है, उसका शरीर सर्वथा निरोग नहीं रह सकता।

कृत्रिम उपयोग: अब कृत्रिम उपयोंके विश्यमें कुछ कह दूं। विषय-भोग करते हुए भी कृत्रिम उपयोंके द्वारा प्रज्वलित रोकनेकी प्रथा पुरानी है। मगर दूसरे में हमें गुप रूपमें चलती थी। अभुनक्ष सम्बन्धते इन जमानमें उसे ऊंचा स्थान मिला है और कृत्रिम अपयोंकी रचना भी व्यवस्थित तरीकेसे की गयी है। इस प्रथमके परमार्थका जामा पहाना गया है। इन उपयोंके हिमायती कहते हैं कि भोगेच्छा तो स्वाभाविक वस्तु है, शायद उसे ईश्वरका विकार भी कहा जा सकता है। उसे निकाल पैकना अशाय है। उस पर समाधक अकुश्ल रखना कठिन है। और अगर संयम सिवा दूसरा कोई उपयों न ढूंढा जाय, तो असंवेदनशील देशके लिए प्रज्वलित
आरोग्य की कुंजी

बोझरूप हो जायगी; और भोगसे उत्पन्न होनेवाली प्रजा इतनी बढ़ जायगी कि मनुष्य-जातिके लिए पूरी खुराक ही नहीं मिल सकेगी।

इन दो अपनियोंको रोकनेके लिए कृत्रिम उपायोंकी योजना करना मनुष्यका धर्म हो जाता है। किंतु मुझ पर इस दलीलका असर नहीं हुआ है, क्योंकि इन उपायोंके द्वारा मनुष्य अनेक दूसरी मुसीबतें मोल ले लेता है। मगर सबसे बड़ा नुकसान तो यह है कि कृत्रिम उपायोंके प्रचारसे संघ-धर्मका लोप हो जानेका भय पैदा होगा। इस रत्नको बेचकर चाहेजैसा तात्कालिक लाभ मिले, तो भी यह सीदा करने योग्य नहीं है। मगर यहाँ मैं दलीलमें नहीं उतरना चाहता। विज्ञापको मेरी सलाह है कि वह 'अनीतिकी राह पर' नामक मेरी पुस्तक पढ़ें और उसका मनन करें। बादमें जैसा उसका हदय और बुझ्द तहे वैसा करें। जिन्हें यह पुस्तक पढ़नेकी इच्छा या अवकाश न हो, वे भूलकर भी कृत्रिम उपायोंके नजरदंडके ना फटें। वे विषय-भोगका त्याग करनेका भीतर धर्म प्रयत्न करें और परिवर्तन नहीं होनेके अनेक क्षेत्रोंमें से थोड़े पसन्द कर लें। ऐसी प्रकृतियाँ दूर हों जिनसे सच्चा दंपती-पेम शुद्ध मार्ग पर लग जाय दोनोंकी उन्नति हो और विषय-वासनाके रूपसे सच्चाशुद्धी ही न मिले।

दंपती ध्यान त्यागका धोड़ा अभ्यास करनेके बाद इस त्यागके भीतर जो रस भरा पड़ा है, वह उन्हें विषय-भोगकी ओर जाने ही नहीं देगा। कठिनई आम-वचनाःसे पैदा होती है। इसमें त्यागका आरम्भ विचार-शुद्धिःसे नहीं होता, केवल बाह्य त्यागको रोकनेके निषेध प्रयत्नसे होता है। विचारका दृढ़ताके साथ आचारका संघ-शुद्ध होता है, तो सफलता मिले जिना रह ही नहीं सकती। धी-पुरुषकी जोड़ी विषय-सेवनके लिए हरिश्चंद्र नहीं बनी है।

*सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली से प्रकाशित। इसका मूल गुजराती संस्करण ‘नीति विनाशने मार्ग’ नवजीवन ट्रस्टने प्रकाशित किया है
दूसरा भाग

1. पृथ्वी अर्थात् मिठी

ये प्रकरण लिखनेका मेरा हेतु यह बताता है कि नैसर्गिक उपचारोंका जीवनमें क्या महत्व है और मैंने उनका उपयोग किस तरहसे किया है। इस विषय पर कुछ तो पिछले प्रकरणोंमे कहा जा चुका है।

(13-12-'42)

यहां वे बातें मुझे कुछ विस्तारसे कहनी हैं। जिन तथापि संयुक्तरूपी पुतला बना है, वे ही नैसर्गिक उपचाररूपके, साधन हैं। पृथ्वी(मिठी), पानी आकाश (अवकाश), तेज(सूर्य) और वायुसे यह शरीर बना है। इन साधनोंका उपयोग यहां क्रमसे बतानेकी मैंने कोशिश की है।

सन् 1901 तक मुझे कोई भी व्यधि होती थी, तो मैं डॉक्टरोंके पास भागता तो नहीं जाता था, मगर उनकी दवाका थोड़ा उपयोग कर लेता था। एक-दो बीजें तो मुझे स्वागाय डॉक्टर प्राणजीवन मेहताने बताई थी। मैं एक छोटेसे अस्पतालमें काम करता था। कुछ अनुभव मुझे वहांसे मिलता और कुछ पढ़नेसे मुझे खास तकलीफ़ कमजोरी करती थी। उसके लिए समयसमय पर में फुट सॉल्ट लेता था। उससे कुछ आराम होता था, मगर कमजोरी मालूम होती थी, जिसमें दर्द होने लगता था और अभी भी मुझे घुट्ठी-मोटी उपद्रव होते रहते थे। इसलिए डॉक्टर प्राणजीवन मेहताकी बताई हुई दवा लोह (डायलाइजड आयरन) और नक्सियोएमें लेने लगा। दवा पर मेरा विश्वास बहुत अलग था। इसलिए लाचार हो जाने पर ही मैं दवा लेता था। इससे मुझे संतोष नहीं होता था।

इस असेमें खुराकके मेरे प्रयोग तो चल ही रहे थे। नैसर्गिक उपचारोंमे मुझे काफी विश्वास था। मगर इस बारेमे मुझे किसीकी मदद नहीं थी। इधर-उधरसे जो कुछ मैंने पढ़ लिया था,उसके आधार पर मुख्यतः भोजनमें फेफड़बदल करके मैं काम चला लेता था। क्रूर घूम लेता था, इसलिए खात पर कभी पड़ना नहीं पड़ा। इस तरहसे मेरी ठीली-ढाली गाड़ी चलता करती थी। ऐसे समय सुस्तकी ‘विंटर टू नेचर’ नामकी पुस्तक भाई पोलाकने मुझे पढ़नेको दी। वे खुद उसके उपचारोंको काममें नहीं लेते थे। खुराक जुस्तने जो बताई थी, वही कुछ हद तक वे लेते थे। लेकिन वे मेरी आदतोंको जानते थे, इसलिए उन्होंने वह पुस्तक मुझे दी। उसमें क्रूर जोर मिठी पर दिया गया है। मुझे लगा कि उसका उपयोग कर लेना चाहिये। जुस्तने कहियतमें मिठीको ठंडे पानीमें भीगोकर बगैर कपड़ें गाड़कर पेड़ पर रखनेकी सुचना की है। मगर मैंने तो एक बारीक कपड़ेमें पुलिसकी तरह मिठीको लोपेट कर सारी रात अपने पेड़ पर रखा। सबके साथ तो दस्तको हाम बढ़ी हुई। पाखाने जाते ही बंधा हुआ सन्तोषकारी दस्त हुआ। यह कहा जा सकता है कि उस दिनसे लेकर आज तक फुट सॉल्टको मैंने
शायद ही कभी छुआ होगा। आवश्यक मालूम होने पर कभी अर्तीका तेल छोटा पैना चम्मच सब्ज़ी जरूर ले लेता है। अर्तीकी यह पट्टी तीन इंच चौड़ी, छह इंच लम्बी और बाज़ेरी रोटीसे दुगनी मोटी या यह कहो कि आया इंच मोटी होती है। जुण्डा दाना है कि जिसे जहरीले सांपने काटा हो उसे गठा खेलकर उसमें अर्तीके से ढंककर सुला देने से जहर उतर जाता है। यह दाना सच्चा साबित हो या न हो, तो अर्तीकी पट्टी सिर पर रखने से बहुत फायदा होता है। यह प्रयोग मैंने सेकड़ों पर किया है। मैं जानता हूँ कि सिर-दर्दने अनेक कारण हो सकते हैं, परंतु सामान्यत: यह कहा जा सकता है कि किसी भी कारणसे अर्ती के दर्द को न हो, अर्तीकी पट्टी सिर पर रखने से तात्कालिक लाभ तो होता है। सामान्य फोड़े-फुसीको भी अर्ती मिटाती है। मैंने तो बहते हुए फोड़े परभी अर्ती रखी है। ऐसे फोड़े पर अर्ती रखने से पहले मैं साफ कपड़ेको पर्मेंटेटको गुलाबी पानीमें भिजाता हूँ, फोड़ेको उससे साफ करता हूँ और फिर उस पर अर्तीकी पलटिस रखता हूँ। इससे अधिकांश फोड़े मिट ही जाते हैं। जिन पर मैं यह प्रयोग किया है, उसमें से एक भी केस निष्काल रहा हो ऐसा नहीं आता। बर्फ़ बीरामें डंक पर अर्ती पुनर्विकास करती है। विच्छुका उपद्रव आये दिनकी बात हो गयी है। विच्छुके जितने इलाजके भी झटके लगा है, वे सब इलाज सेवाग्राममे आजमा कर देखे गये हैं। मगर उनमें से किसीको भी अचूक नहीं कहा जा सकता। अर्ती उनमें किसीसे कम साबित नहीं हुई।

सबल बुखारमें अर्तीका उपयोग अंधेर पर रखनेके लिये और सिरमें दर्द हो, तो सिर पर रखनेके लिये मैंने किया है। मैं यह तो नहीं कह सकता कि इससे हमेशा बुखार उत्तर ही है, मगर अर्तीकी इससे शांति जसर मिली है।

(14-12-'42)

ताइफ़ाइडमें मैंने अर्तीका खूब प्रयोग किया है। यह बुखार हो अपनी मुद्दत लेकर ही जाता था, मगर अर्तीसे रोगीको हमेशा शांति मिलती थी। सब रोगी खुद अर्ती मांगते थे। सेवाग्राम आश्रममें टाइफ़ाइड के त्सक केस हो चुके हैं। पर उनमें से एक भी फुसी नहीं विगड़ा। सेवाग्राममें महात्मा गांधी टाइफ़ाइडसे लोग डरते नहीं हैं। मैं कह सकता उनके आश्रममें एक भी अर्तीकी चीज हो नहीं गई। अर्तीकी चीज़ ही एक भी अर्तीकी उपाय नहीं रही। अर्तीकी सिचा दूसरे नैसर्गिक उपचारोंको उपयोग मैंने जरूर किया है, मगर उनकी चर्चा मेरे स्थान पर करना।

अर्तीका उपयोग सेवाग्राममें एक्स्ट्रीज़िनिकी जगह पर छूटसे हुआ है। उसमें थोड़ा सरसोंसे तेल और नमक मिलाया जाता है। इस अर्तीकी अच्छी तरह गरम करना पड़ता है। इससे यह विलकुल निरोध बन जाती है।

अर्ती केसी होनी चाहिये, यह कहना अभी भारक है। मेरा पहला परीचय तो अच्छी लाल अर्तीसे हुआ था। पानी मिलाने पर उसमें से मुक्त निकलती है। ऐसी अर्ती सहानीसे नहीं मिलती। बसबसे जैसे शहरमें तो किसी भी तारही अर्ती पानी मेरे ही लिये कठिन हो गया था। अर्ती न मान बहुत चीकरी होनी चाहिये और न विलकुल
रेतीली। खाद्यवस्त्र तो हरसिंह न होनी चाहिये। वह रेतकी तरह मुलायम होनी चाहिये और उसमें कंकरी बिलकुल न होनी चाहिये। इस लिए उसे बारीक छलनीसे छान लेना अच्छा है। बिलकुल साफ न लगे तो उसे सेंक लेना चाहिये। मिट्टी बिलकुल सूक्ष्म होनी चाहिये। गीली हो तो उसे धूपमें या अंगीठी पर सूखा लेना चाहिये। सफ भाग पर इस्तेमाल की हुई मिट्टी सूखाकर बार-बार इस्तेमाल की जा सकती है। इस तरह इस्तेमाल करनेसे मिट्टीका कोई गुण कम होता हो ऐसा मैं नहीं जानता। मैंने इस तरह मिट्टीका कोई गुण कम होता हो ऐसा मैं नहीं जानता। मैंने इस तरह मिट्टीका इस्तेमाल किया है और मेरे अनुभव में यह नहीं आया कि उसका कोई गुण कम हुआ है। मिट्टीका उपयोग करनेवालोंसे मैंने सुना है कि जमनाके किनारे जो पीली मिट्टी मिलती है वह बहुत गुणकारी होती है।

मिट्टी खाना: क्युनें सिखा है कि साफ बारीक समुद्री रेती दस्त लानेके लिए उपयोगमें ली जाती है। मिट्टी किस तरह काम करती है, इसके बारे में उन्होंने बताया है कि मिट्टी पचती नहीं, उसे कचरे (refuse) तरह पेटसे बाहर निकलना ही होता है। और अपने पत्थर वह मलको भी बाहर निकलती है। लेकिन इसका मैंने तो कभी अनुभव नहीं किया है। इसलिए, जो लोग यह प्रयोग करना चाहें, वे सोच-समझ कर ही करें। एक-दो बार आजमा कर देखनें कोई नुकसान होनकी संभावना नहीं है।
2. पानी

पानीका उपचार एक प्रसिद्ध और पुरानी श्रीम है। उसके बारे में अनेक पुस्तकें लिखी गयी हैं। क्युने पानीका उत्तम उपयोग ढूंढ निकाला है। क्युने पुस्तक हिन्दुस्तानी में बहुत प्रसिद्ध हुई है और उसका तर्जना भी हमारी भाषाओं में हुआ है। उसके सबसे अधिक अनुयायी आन्ध्र देशाओं में मिलते हैं। क्युने हुए बारेमें भी ज्ञानी लिखा है। मगर यहां तो मेरा विचार केवल पानीके उपचारोंके बारे में ही लिखनेका है।

क्युने उपचारोंके मध्यबिनु कर्ष-स्थान और घर्षण-स्नान हैं उनके लिए उसने खास बरतनकी भी योजना की है। मगर उसकी खास आवश्यकता नहीं है। मनुष्यके कदने अनुसार तीसरे छत्तीसं इंच गहराई टब ठीक काम देता है। अनुभवसे ज्यादा बडे टबकी आवश्यकता मालूम हो, तो ज्यादा बडा ले सकते हैं। उसमें ठंडा पानी भरना चाहिये। गर्मीके ऊँचे पानीके ठंडा रखने खास आवश्यकता है। पानीको तुरन्त ठंडा करने के लिए यादे मिल सके तो थोडी बरफ डाल सकते हैं। समय हो तो मिट्टीके घडेमें ठंडा किया हुआ पानी अच्छी तरह काम के सकता है। टबमें पानीके ऊँचा एक कपड़ा ढंककर जल्दी-जल्दी पंखा करते हैं भी पानीको तुरन्त ठंडा किया जा सकता है।

टबको दीवारेंके साथ लगाकर रखना चाहिये और उसमें पीठको सहारा देनेके लिए एक लम्बा लकडीका तख्ता रखना चाहिये, ताकि उसका सहारा लेकर रोगी आरामसे बैठ सके। रोगीको अपने पैर पानीसे बाहर रखकर टबमें बैठना चाहिये। रोगीको आरामसे टबमें बैठाकर पेड़ पर नरम तौलिये धीर-धीर घर्षण करना चाहिये। पांच मिनटसे लेकर तीस मिनट तक टबमें बैठ सकते हैं। स्नानके बाद गर्मीके सूखाकर रोगीको बिस्तरमें सुला देना चाहिये। यह स्नान बहुत सबक बुखारको भी उत्तर देता है। इस तरह स्नान लेनेमें नुकसान तो है ही नहीं, जबकि लाभ प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। स्नान भूखे पेट ही लेना चाहिये। इसके कमियोंको भी फायदा होता है। और अजीरण भी मिटता है। स्नान लेनेवालेके शरीरमें उससे स्पृहा आती है। कमियोंतराइंसको स्नानके बाद आधा घंटा ठहरनेकी सलाह क्युने पानी है। इस स्नानका भी बहुत उपयोग किया है। मैं यह नहीं कह सकता कि वह हमेशा ही सफल हुआ है, मगर इतना कह सकता हूँ कि सीमें पता आता बार बहुत सफल हुआ है। खुब बुखार जा हुआ हो, तब यदि रोगीकी स्थिति ऐसी हो कि उसे टबमें बैठाया जा सके, तो उससे दो-तीन दिनों तक बुखार अवश्य उत्पन्न होगा और सन्तप्तका भय मिट जायगा।

इस स्नानके बारेमें क्युने के लिए यह है: बुखारके बाहर बिह भले कुछ भी हों, मगर उसका आत्मरक कारण तो एक ही होता है। आंतोंमें इकड़े हुए मलके जहरे या अन्य कारणोंसे बुखार उत्पन्न होता है।
आरोग्य की कुंजी

(15-12-'42)

यह आंतोंका बुखार – उनकी गर्मी – अनेक रूप लेकरबाहर प्रकट होता है। यह आंतरिक बुखार कटियाँ स्नान से अवश्य लतरता है और उससे बाहरके अनेक उपद्रव शान्त होते हैं। मैं नहीं जानता कि इस दलीलमें कितना तथ्य है। यह तो अनुभवी डॉक्टर ही बता सकते हैं। डॉक्टरों द्वारा नैसर्गिक उपचारों में कई एकको अपना लिया है, तो भी यह कहा जा सकता है कि वे इन पउचारोंके विषयं उदासीन रहे हैं। इसमें मैं दोनों पक्षोंका दोष पाता हूँ। डॉक्टरों डॉक्टरोंके शिक्षण - केन्द्राईमें सीखी हुई बातों पर ही ध्यान देनेकी आदत डाल ली है, इसलिए बाहरली चीजोंके प्रति वे लोग तिःस्कर नहीं तो उदासीनता अवश्य बताते हैं। नैसर्गिक उपचार करनेवाले लोग डॉक्टरोंके प्रति तिःस्कर भाव रखते हैं। उनके पास शाखाराम ज्ञान बहुत कम होता है, तो भी वे दावे बहुत बड़े-बड़े करते हैं। संपशालिका उन उपचारकोंमें अभाव रहता है, क्योंकि सब अपनेअपने ज्ञानके पुंजोंसे ही संतोष मानते हैं। इसलिए कोई दो उपचारक साथ मिलकर काम नहीं कर सकते। किसीके प्रयोग गहरे नहीं उतरते। बहुतोंमें नम्रता तथा भी अभाव होता है। (क्या नम्रता सीखी भी जा सकती है?) यह सब कहकर मैं नैसर्गिक उपचारकोंको कोसने नहीं चाहत, परन्तु वस्तुनिष्ठता बता रहा हूँ। जब तक उन लोगोंके बीच अस्त्यं तेजस्वी मनुष्य पैदा नहीं होता, तब तक यह स्थिति बदलनेकी कम सम्भावना है। इस स्थितिको बदलनेकी जिम्मेदारी नैसर्गिक उपचारकों पर है। डॉक्टरोंके पास उनका अपना शास्त्र है, अपनी प्रतिष्ठा है, अपना संघ है और अपने विद्यालय भी है। अमुक हद तक उन्हें अपने काममें सफलता भी मिलती है। उनसे यह आशा नहीं रखनी चाहिए कि एक अपरिचित ज्ञातको, जो डॉक्टरीकी मार्फत् नहीं आई है, वे एकाएक ग्रहण कर लेंगे।

अब मैं घषणण-स्नान पर आता हूँ। जननीद्राय बहुत नाजुक इन्द्रिय है। उसकी ऊँची मचौंकर सिमेर मुधे अच्छा चाहिए। उसका वर्णन करना मुझे नहीं आता है। इस ज्ञानका लाभ लेकर कुमारे कहा है कि इस इन्द्रियके सिरे पर (पुष्करी) चन्द्री चढ़कर नरम रुमालको पानीमें भिड़कर धारते जाना चाहिए और पानी डालते जाना चाहिए। उपचारकी पस्तिम यह बताई गई है: पानीके तबमें एक स्टूल रखा जाय। स्टूलकी बैठक पानीकी सतहसे थोड़ी ऊँची होनी चाहिए। इस स्टूल पर पांव टबसे बाहर रखकर बैठ जाना चाहिए और इन्द्रियके सिरे पर घर्षण करना चाहिए। उसे तनक भी तकलीफ़ नहीं पुंजीचार नहीं होतें। यह क्रिया बीमार को अच्छी लगनी चाहिए। यह स्नान लेनेवालेके इस घर्षणसे बहुत शान्ति मिलती है। उसका रोग भले कुछ भी हो, उस समय तो यह शान्त हो ही जाता है। कुमारे इस स्नानको कट-स्नानसे भी ऊँचा स्थान दिया है। मुझे जितना अनुभव कटस्नानका है, उतना घर्षण स्नानका नहीं है। इसमें मुख्य दोष तो में अपनी ही मानता हूँ। मैंने घर्षण-स्नानका प्रयोग करनेमें धीरजसे इसका प्रयोग नहीं किया। इसलिए इस स्नानके परिणामके बारेमें में नजी अनुभवसे कुछ भी नहीं लिख सकता। सबको इस स्वयं आंजना कर देख लेना चाहिए। टब वैग न मिल सके, तो लोटेमें पानी भरकर भी घर्षण-स्नान किया जा सकता है। उससे शांति तो अवश्य ही मिलेगी। लोग इस इन्द्रियकी सफाई पर बहुत कम ध्यान देते हैं। घर्षण-स्नानसे वह आसानीसे साफ हो जाती है। अगर
द्यान न रखा जाय, तो सुपरीको डंकनेवाली चमडीमें मैल भर जाता है इस मैलको साफ करनेकी पूरी आवश्यकता है। जननेत्रका उपयोग घर्षण-स्नानके लिए करने और उसे सफासुधा रखनेसे ब्रह्मचर्य-पालनमें मदद मिलता है। इससे आसापंके तनु मजबूत और शान्त बनते हैं और इस इन्द्रियके द्वारा व्यर्थ बीच-स्वल्पन न होने देखनेचाहनी बढ़ती है, क्योंकि इस तरह स्वास्थ होने देनेमें जो गंदगी रहती है, उसके लिए हमारे मनमें नफरत पैदा होती है, और होनी भी चाहिए।

इन दोनों खास स्नानीको हम कुले-स्नान कह सकते हैं। तीसरा ऐसा ही असर पैदा करनेवाला चहर-स्नान है। जिसे बुखार आता हो या किसी तरह भी नींद न आती हो, उसके लिए यह स्नान उपयोगी है।

खाट पर दो-तीन गम कम्बल बिछानेचाहिए। ये काफी चित्रे होने चाहिए। इसके ऊपर एक मोटी सूती चहर – मोटी खादीका खेस – बिछाना चाहिए। इस चहरको ठंडे पानीमें भिगोकर और खूब निचोड़कर कम्बलों पर बिछाना चाहिए। इसके ऊपर रोगीको कपड़े उतारकर चित्र सुला देना चाहिए। उसका सिर कम्बलोंके बाहर तकिये पर रखना चाहिए और सिर पर गीला निचोड़ा हुआ तीलिया रखना चाहिए। रोगीको सुलाकर तुन्त कम्बलके किनारे और चहर चारों तरफ़े सीटर पर लपेट देना चाहिए। हाथ कम्बलोंके अन्दर होने चाहिए और पैर भी अच्छी तरह चहर और कम्बलोंसे ढंके रहने चाहिए, ताकि बाहरका पवन भीतर न जा सके। इस स्थितिमें रोगीको एक-दो मिनटमें ही गम्भीर लगनी चाहिए। सर्दीका क्षणिक आभासमात भालते समय होगा, बादमें तो रोगीको अच्छी ही लगनी चाहिए। बुखारने अगर घर न कर लिया हो, तो पाँच रोज दो मिनटमें गम्भीर लगकर पसीना छूटने लगेगा। परन्तु सइल वीमारमें मैंने आधे घाटे तक रोगीको इस तरह गीली चहरमें रखा है और अन्तमें उसे पसीना आया है। कभी-कभी पसीना नहीं छूटता, मगर रोगी सो जाता है। सो जाने के बाद रोगीको जग नहीं चाहिए। नींदका आना इस बातका सूचक है कि उसे चहर-स्नानसे आराम मिलता है। चहरमें रखनेके बाद रोगीको बुखार एक-दो डिग्री तो नीचे उतरता ही है। मेरे (दूसरे) लड़केमें उसे चहर-स्नान कराया। वह पसीनेसे तरबत हो गया और तीन-चार दिन इस तरह करनेके बाद उसका बुखार उठ गया। उसका बुखार आखिर टाइफाइड सिंधु हुआ और 42 दिनके बाद ही पूरी तरह उतरा। चहर-स्नान जब तक बुखार 160 तक जाता था तभी तक दिया गया। सात दिनके बाद इतना सख्त बुखार अना बन गया, निचोड़ा मिट गया और टाइफाइडके रूपमें उसे 103 तक बुखार रहने लगा। हो सकता है कि बुखारके अंश (डिग्री) के बारेमें मेरी स्मरण-शक्ति भुले धोखा देली हो। यह उपचार मैंने डॉक्टर मित्रोंका किरोध करके किया था। दवा तो बिलकुल नहीं दी। इस बात तो इतनी भीतर नहीं दी। चहर-स्नान काम देता है। जहाँ थमोरी निकली हुई हो, पिटी (prickly heat) निकली हुई हो, आमवाल (urticaria) निकला हो, बहुत खुजली आती हो, खसरा या चेहरेचिकला हो, तो भी यह चहर-स्नान काम देता है।
आरोग्य की कुंजी

(16-12-'42)

मैंने इन सब रोगों में चढ़-स्तानका उपयोग छूटसे किया है। चेचक या खसरों में पानी में गुलाबी रंग आ जाय इतना पानीगेट डालता था। चढ़का उपयोग हो जाने पर उसे उबलते पानी में डाल देना चाहिये और जब पानी कुनकुना हो जाय, तब उसे अच्छी तरह धोकर सुखा लेना चाहिये।

रक्तकी गति मनद पड़ गयी हो, या पांव टूटे हों, तब बरफ चिसमें से बहुत फायदा होते मैं देखा है। बरफके उपचारका असर गर्मीकी क्रमूम के अधिक अच्छा होता है। सदीकी क्रमूम कर रहा मनुष्य पर बरफका उपचार करनेमें खतरा है।

अब गरम पानीके उपचारोंके बारेमें विचार करें। गरम पानीका समझौता उपयोग करनेमें अनेक रोग शान्त हो जाते हैं। जो काम प्रसिद्ध दवा आयोडीन करती है, वही काम जानी है। तब गरम पानी कर देता है।

सूजनवाले भाग पर हम आयोडीन लगाते हैं। उस पर गरम पानीकी पट्टी रखने से आयोडीन होना संभव है। कानके दर्दमें हम आयोडिनकी बुंदे डालते हैं। इसमें भी गरम पानीकी पट्टी रखने से ताकत होने पर सभी है। आयोडीनके उपयोगमें कुछ खतरा रहता है, जब कि गरम पानी के उपचारमें कुछ भी नहीं। जिस तरह आयोडीन जटूनाशक (disinfectant) है, उसी तरह उबलता गरम पानी भी जटूनाशक है। इसका यह अर्थ नहीं है कि आयोडीन उपयोगी बसू नहीं है। उसकी उपयोगिता वारेमें मेरे मनमें तनिक भी शांका नहीं है।

मागर गरीबके घरमें आयोडीन नहीं होता। वह महंगी चीज है। वह हरेक आदमीके हथों में नहीं रखा जा सकता। मागर पानी तो हर जगह होता है। इसलिए हम दवाके तीर पर उसके उपयोगकी अवगुणना करते है। ऐसी अवगुणनासे हमें बचना चाहिये। ऐसे घरेलू उपचारोंको सीखकर और उन्हें अपनाकर हम अनेक भयोंसे बच जाते हैं।

भविष्यके कांटे को जब दूसरी किसी चिंजसे फ़ायदा नहीं होता, तब डंकवाले भागको गरम पानी में रखने से कुछ आयोडीन तो भिलता ही है।

एकाध सदीकी, कंप्यूटर चढ़ने लगे, तब रोगीको भाग देनेसे, या उसे अच्छी तरह कम्बल और आयोडीन होता है। बच्चों और गरम पानीकी बोतलें रखने से उसकी कंप्यूटर मिटायी जा सकती है। सबके पास बड़की गरम पानीकी थैली नहीं होती। कांचकी मजबूत बोतलें मजबूत काँक लगाकर उसे गरम पानीकी थैलीके तीर पर इस्तेमाल किया जा सकता है। धातुकी या दूसरी बोतल बहुत गरम हो, तो उसे कपड़ेमें लपेटकर इस्तेमाल करना चाहिये।

भाष्करके रूपमें पानी बहुत काम देता है। पानी में आता हो तो भाष्करे द्वारा लाया जा सकता है। गटियासे जिसका ठीक निक़ामा बन गया हो, या जिनका ढ़जन बहुत बढ़ गया हो, उनके लिए भाष बहुत उपयोगी बसू नहीं है।
भाषिक कुंजी

आरोग्य की कुंजी

भाप लेनेका पुराना और आसानसे आसान तरीका यह है : सनकी या सुतलीकी खाट इस्तेमाल करना ज्यादा अच्छा है, मगर नवारकी खाट भी चल सकती है। खाट पर एक खेस या कम्बल बिठाकर रोगीको उस पर सुला देना चाहिये। उबलते पानीके दो पतीले या हंडे खाटके नीचे रखकर रोगीको इस तरह ढंक देना चाहिये। कि कम्बल खाट परसे लटक कर चारो तरफ जमीनको छू ले, ताकि खाटके नीचे बाहरकी हवा जा ही न रहे। इस तरहसे लपेटनेके बाद पानीके पतीलों या हंडों परसे ढंकना उत्तर देना चाहिये। इससे रोगीको भाप मिलने लगेगी। अच्छी तरह भाप न मिले, तो पानीको बदलना होगा। दूसरे हंडमें पानी उबलता हो, तो उसे खाटके नीचे रख देना चाहिये।

(17-12-'42)

साधारणतया हम लोगामें यह रिवाज है कि हम खाटके नीचे अंगों रखते हैं और उसके ऊपर उबलते हुए पानीका बरतन। इस तरह पानीक गर्मी कुछ ज्यादा तो मिल सकती है, मगर इसमें दुर्घटना का डर रहता है। एक चिन्हारी भी उड़े और कम्बल या किसी दूसरी चीजको आग लग लगाय, तो रोगीकी जान खतरे में ढप सकती है। इसलिए तुरंत ही गर्मा पानी लोभ छोड़कर जो तराका मैने बताया है उसीका उपयोग करना ज्यादा अच्छा है।

कुछ लोग भापके पानीमें वस्तुतियां डालते हैं, जैसे कि नीमके पते। मुझे स्वयं इसकी उपयोगिता अनुभव नहीं है, मगर भापका उपयोग लो प्रत्यक्ष वाला ही है। यह हुआ पसीना लानेका तरीका।

पांव ठंडे हो गये हों या टूटे हों, तो एक गहरे बरतनमें, जिसमें कि घुटने तक पांव पहुंच सकें, सहन होने लायक गर्म पानी भरना चाहिये और उसमें रेखी भुक्की डालकर कुछ मिनट तक पांव रखने चाहिये। इससे ठंडे पांव गर्म हो जाते हैं, बैंची और पांवका टूटना बन्द हो जाता है, खून नीचे उतरने लगता है और रोगीको आराम मालूम होता है। बलगम हो या गला दुखता हो, तो केटलीको एक स्वतंत्र नली लगा कर उसके द्वारा आरामसे भाप ली जा सकती है। यह नली लकड़ीकी होनी चाहिये। इस नली पर रबड़ीकी नहीं लगा लेनेसे काम और भी आसान हो जाता है।
3. आकाश
आकाशका ज्ञानपूर्वक उपयोग हम कमसे कम करते हैं। उसका ज्ञान भी हमें कमसे कम होता है। आकाशको अवकाश काह जा सकता है। दिनमें अगर बादल न हों तो ऊपरकी ओर देखने पर एक अत्यन्त स्वच्छ, सुंदर, आसमानी रंगका शामिलयाना नजर आता है। उस शामिलयानको हम आकाश कहते हैं। इसका दूसरा नाम आसमान है न? इस शामिलयानको कोई ओर-छोर देखनेमें नहीं आता। वह जितना हमसे दूर है, उतना ही हमारे नजदीक भी है। हमारे चारों ओर आकाश न हो, तो हमारा खातमा ही हो जाय। जहाँ कुछ भी नहीं है वहाँ आकाश है। इसलिए यह नहीं समझना चाहिये कि दूरदूर जो आसमान रंग देखनेमें आता है, सिर्फ वही आकाश है। आकाश तोहमारे पाससे ही शुरु हो जाता है। इतना ही नहीं, वह हमारे भीतर भी है। खालीपन अथवा शून्य (vacuum)को हम आकाश कह सकते हैं। मगर सच है लक हम हि को देख नहीं सकते। मगर हवाके रहनेका ठिकाना कहाँ है? हवा आकाशमें ही बिहार करती है न? इसलिए आकाशसे हम अलग हो ही नहीं सकते। हवाको हमारे होत हत तक पम्प द्वारा खींचा भी जा सकता है, मगर आकाशको कौन है खींच सकता है? यह सही है कि हम आकाशको भर देते हैं। मगर क्योंकि आकाश अनन्त है, इसलिए कितने भी शरीर क्यों न हो, सब उसमें समा जाते हैं।

इस आकाशकी मदद हमें आरोग्यकी रक्षाके लिए और उसे खो चुके हों तो फिरसे प्राम करनेके लिए लेनी है शून्य जीवनके लिए हवाकी सबसे अधिक आवश्यकता है, इसलिए वह सर्व-व्यापक है। मगर हवा धूसरी चीजोंके गुणात्मक प्रभाव तो है, पर अनन्त नहीं है। भौतिकशास्त्र हमें सिखाता है पृथ्वीसे अनुप्रेरित मील ऊपर चले जायें, तो वहाँ हवा नहीं मिलती। ऐसा कहा जाता है कि इस पृथ्वीके प्रभावयों जैसे प्राणी हवाके आवरणसे बाहर रह ही नहीं सकते। यह बात सच हो या न हो, हमें इतना ही समझना है कि आकाश जैसे यहाँ है, वैसे ही वह हवाके आवरणसे बाहर भी है। इसलिए सर्व-व्यापक तो आकाश ही है, फिर भले वैज्ञानिक लोग सिद्ध किया करें कि उस आवरणके ऊपर 'ईश्वर'नामका पदार्थ या कुछ और है। वह पदार्थ भी जिसके भीतर रहता है वह आकाश ही है। दूसरे शब्दोंमें यह कहा जा सकता है कि अगर हम ईश्वरके भेद जान सकेंगे, तो आकाशका भेद भी जान सकेंगे।

इसे महान तत्वका अभ्यास और उपयोग जितना हम करेंगे, उतना ही अधिक आरोग्यका उपभोग कर सकेंगे।

पहला पाठ तो यह है कि इस सूर्य और अन्य तत्वके और हमारे बीचमें कोई आवरण नहीं आने देना चाहिये। अर्थात् यदि घरबारके बिना, अथवा कड़वोंके बिना हम इस अनन्तके साथ समबन्ध जोड़ सकें तो हमारा शरीर, बुद्धि और आत्मा पूरी तरह आरोग्यका अनुभव कर सकेंगे। इस आदर्श तक हम भले ही न पहुंच सकें, या करोडों में एक ही पहुंच सकें, तो भी इस आदर्शको जानना, इसे समझना और इसके प्रति आदर-भाव रखना आवश्यक है। और यदि हम आदर्श हो, तो जिस हद तक हम इसे प्राम कर सकेंगे, उसी हद तक हम
सुख, शान्ति और सन्तोषका अनुभव कर सकेंगे। इस आदशको में आखिरी हद तक पेश कर सकू, तो मुझे यह कहना पड़ेगा कि हमें शरीरका अन्तराय भी नहीं चाहिये, अर्थात शरीर रहे या जाये, इस बारे में हमें तटस्थ रहना चाहिये। मनको हम इस तरह शिक्षण दे सकेंगे, तो शरीरको विषय-भोगका साधन तो कभी नहीं बनायेंगे।

तब अपनी शक्ति और अपने ज्ञानके अनुसार हम अपने शरीरका सदुपयोग सेवकरे लिए, ईश्वरको पहचाननेके लिए, उसके जगतको जाननेके लिए और उसके साथ ऐक्य साधनेके लिए करेंगे।

इस विचारसत्ती के अनुसार घरबार, बस्तिके उपयोगमें हम काफी अवकाश रख सकते हैं। कई घरों में इतना साज-समान देखनेमें आता है कि मेरे जैसे गरीब आदमीको तो उसमें दम ही पुटने लगता है। उन सब चीजोंका जीवनमें व्यय है, बहां तो मैं खो ही जाता हूँ। यहांकी कुस्तियां, मेजें, अलसारियां और शीशो मुझे पकड़नेको वैदिक हैं। यहांकी क्रीमी कालीन केवल धूल इकट्ठी करते हैं और सूखा जनुआरी घर बने हुए हैं। एक बार एक कालीनको झाड़नेके लिए निकाला गया था। वह एक आदमीका काम नहीं था। छह-सात आदमी उसमें लगे। कमसे कम दस रतल धूल तो उसमें से निकली ही होगी। जब उसे बाप्स उसकी जगह रख गया, तो उसका स्पर्श, नया ही मालूम हुआ। ऐसे कालीन घर शेड ही निकाले जा सकते हैं। अगर निकाले जायं तो उनकी उम्र कम हो जाएंगी और मेहनत बढ़ेगी। यह तो मैं अपना ताजा अनुभव लिख गया। उस आदमीके साथ मेल मेलावते मेरी अनेक झुंझटें कम कर डाली हैं। अधिक व्यक्ति, वस्त्री सादगी और रहन-सहनकी सादीको बढ़ाकर, एक शब्दमें कहूँ, और हमारे विषयसे सम्बन्ध रखनेवाली भाषामें कहूँ, तो मैं अपने जीवनमें उत्तरात खालीपनको बढ़ाकर आकाशके साथ सीधा सम्बन्ध बढ़ाया है। यह भी कहा जा सकता है कि जैसे-जैसे यह सम्बन्ध बढ़ता गया, वैसे-वैसे मेरा आरोग्य भी बढ़ता गया, मेरी शान्ति बढ़ती गई, सन्तोष बढ़ता गया और धनेच्छा बिलकुल मन्द पड़ती गई। जिसने आकाशके साथ सम्बन्ध जोड़ा है, उसके पास कुछ नहीं है, और सब-कुछ है। अन्तमें तो मुनुष्य उत्तमका ही मालिक है न, जितनेका वह प्रतिदिन उपयोगसे वह आगे बढ़ता है। सब कोई ऐसा करें तो इस आकाश-व्यक्ति जगतमें सबके लिए स्थान रहे और किसीको तंगीका अनुभव ही न हो।

इसलिए मुनुष्यके सोनेका स्थान आकाशके नीचे होना चाहिये। ऑस्प और सदीसे बचनेके लिए हम काफी ओढ़नेको रख सकते हैं। वर्षा कलामेंके एक छातीकी छी छत भले ही रहे, माग बाकी हर समय हमकी छत अगणित तारागणवरे जड़ा हुआ आकाश ही होगा। जब आंख खुलेगी, वह प्रतिक्षण नया-नया दुर्ग देखेगा। इस दृश्यसे वह कभी भी ऊबेगा नहीं।
(18-12-'42)

इससे उसकी आंखे चौंधियांगी नहीं बल्कि वे शीतलताका अनुभव करेगी। तारागणोंका यह भव्य संघ उसे घूमता ही दिखाई देगा। तो मनुष्य उनके साथ सम्पर्क साधकर सोयेगा, उन्हें अपने हृदयका साक्षी बनायेगा, वह अपवित्र विचारोंको कभी अपने हृदयके स्थान नहीं देगा और शान्त निद्राका उपभोग करेगा।

परंतु जिस तरह हमारे आसपास आकाश है, उसी तरह हमारे भीतर भी वह है। चमड़ीके एक-एक छिद्रमें और दो छिद्रोंके बीचकी जगहमें भी आकाश है। इस आकाशको - अवकाशको - भरनेका हम जरा भी प्रयत्न न करें। इसलिए, आहार जितना आवश्यक हो उतना ही यदि हम लें तो शरीरको अवकाश रहेगा। हमें इस बातका हमेशा भांत नहीं रहता कि हम कब अधिक या अयोग्य आहार कर लेते हैं। इसलिए, अगर हम हमें एक दिन या पखवाएमें एक दिन या सुविधासे उपवास करें, तो शरीरका सत्तुलन क्रायम रख सकते हैं। जो पूरी दिनका उपवास न कर सकें, वे एक या एकसे अधिक वक्ताका खाना छोड़नेसे भी लाभ उठायेंगे।
4. तेज

जैसे आकाश, हवा, पानी आदि तत्वों के बिना मनुष्यका निर्वाह नहीं हो सकता, वैसे ही तेज अर्थात् प्रकाशके बिना भी नहीं हो सकता। प्रकाश-मात्र सूर्यसे मिलता है। सूर्य नहीं हो तो न तो हमें गर्मी मिल सके, न प्रकाश। इस प्रकाशका हम पूरा उपयोग नहीं करते, इसलिए पूर्ण आरोग्यका भी हम अनुभव नहीं करते। जैसे हम पानीका स्नान करके सफाई होते हैं, वैसे ही सूर्य-स्नान करके भी हम साफ और सुंदर हो सकते हैं। दुर्बल मनुष्य या जिसका खून सूख गया हो, वह यदि प्राप्तकालें सूर्यकी किरणें नंगे शरीर पर ले, तो उसके चेहरका पीकापन और दुर्बलता दूर हो जायगी और पाचन-क्रिया यदि मंद हो तो वह जायगी हो जायगी। संबंध जिथे धूप ज्यादा न चढ़ी हो, उस बज्ज यह स्नान करना चाहिये। जिसे नंगे शरीर लेते या बैठनेमें नंदी लगे, वह आंवश्यक कपड़े लेते या बैठे और जैसे-जैसे शरीर स्नान करता जाय वैसे-वैसे कपड़े हटाता जाय। हम नंगे बदन धूपमें रहते भी सकते हैं। कोई देख न सके ऐसी जगह दूहकर यह क्रिया की जा सकती है। अगर ऐसी सहलिवत पैदा करनेके लिए दूर जाना पड़े और इतना समय न हो तो बारिक लंगोटिसे गुद्दा भागोंको ढंककर सूर्य-स्नान लिया जा सकता है।

इस प्रकार सूर्य-स्नान लेनेसे बहुतसे लोगोंको लाभ हुआ है। क्षय रोगमें इसका खूब उपयोग होता है। सूर्य-स्नान अब केवल नैसर्गिक उपचारकोंका विषय नहीं रहा। डॉक्टरोंके देखरेखके नीचे ऐसे मकान बनाये गये हैं। जहां ठंडी हवामें कांचकी ओटें सूर्य-किरण सेवन किया जा सकता है।

कई बार फोड़का घर भरता ही नहीं है। पर असे सूर्य-स्नान दिया जाय तो वह भर जाता है।

पसीना लानेके लिए, मैं रोगियोंको ग्यारह बजेकी जलती धूपमैं मुलाया है। इससे रोगी पसीने तरबत हो जाता है। इतनी तेज धूपमें मुलानेके लिए रोगीके पर मिट्टीकी पट्टी रखनी चाहिये। उस पर केलेके या दूसरे बड़े पते रखने चाहिये, जिससे रोगीका सिर ठंडा और सुरक्षित रहे। सिर पर तेज धूप कभी नहीं लेनी चाहिये।
5. वायु – हवा

जैसे पहले तत्त्व उपयोगी हैं वे ही यह पांचचां तत्त्व भी उत्तम उपयोगी है। जिन रांच तत्त्वों का यह मनुष्य-शरीर बना है, उनके बिना मनुष्य टिक ही नहीं सकता। इसलिए वायुसे किसीको डरना नहीं चाहिये। आम तौर पर हम जहां कहीं जाते हैं, वहां घरमें वायु और प्रकाशका प्रवेश बन्द करके आरोग्यको खतरेमें डालते हैं। सच तो यह है कि यदि हम बचपनसे ही हवाको डर न रखना सीखे हों, तो शरीरको हवा सहन करनेकी आदत हो जाती है और जुकाम, बलगम इत्यादिसे हम बच जाते है। हवाके प्रकरणमें इस बारे मे लिख चुका हूं। इसलिए वायुके विषयमें यहां अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं रहती।